CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE

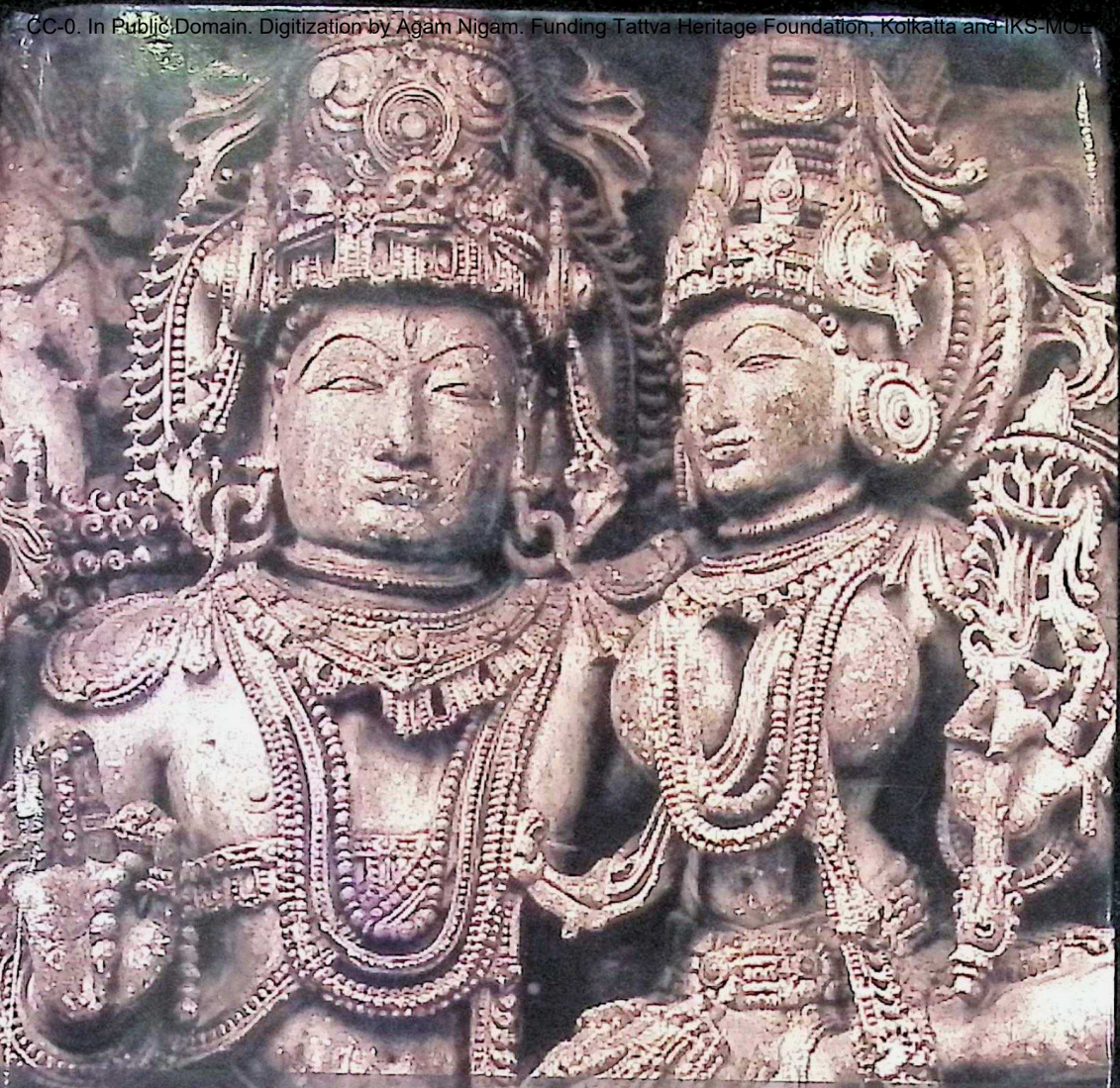

शैवधर्मप्रतिपादकं स्कन्दागस्त्यसंवादमयं

# श्रीमद्शिवधर्मोत्तरपुराणम्

( शैवधर्मसम्मत उपपुराण )

( मूलपाठ एवं मोहनबोधिनी हिन्दी टीका सहित )

सम्पादक एवं अनुवादक

डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

प्रो. भँवर शर्मा

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE

C.S.S

CENTRE FOR SHAIVA STUDIES
Puducherry

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE

चौखम्बा संस्कृत सीरीज
१६६

शैवधर्मप्रतिपादकं स्कन्दागस्त्यसंवादमयं

# श्रीमद्शिवधर्मोत्तरपुराणम्

## ( शैवधर्मसम्मत उपपुराण )

( मूलपाठ एवं मोहनबोधिनी हिन्दी टीका सहित )

सम्पादक एवं अनुवादक
डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'
प्रो. भँवर शर्मा

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-I

प्रकाशक : चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, विक्रम सम्वत् 2073, सन् 2016

ISBN : 978-81-7080-474-1

© डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'

**चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस**
के. 37/99, गोपाल मन्दिर लेन, गोलघर (मैदागिन) के पास
पोस्ट बॉक्स नं. 1008, वाराणसी-221001 (भारत)
फोन : आफिस : 0542-2333458; आवास : 0542-334032, 2335020
फैक्स : 0542-2333458
E-mail : cssoffice01@gmail.com
Website : www.chowkhambasanskritseries.com

अपरं च प्राप्तिस्थानम्
**चौखम्बा कृष्णदास अकादमी**
के. 37/118, गोपाल मन्दिर लेन
निकट गोलघर (मैदागिन), पोस्ट बॉक्स नं 1118
वाराणसी - 221001 (भारत)
दूरभाष : 0542-2335020

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE

CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES
166

# ŚRIMAD ŚIVDHARMOTTARPURĀṆAṂ

## ( The Mythological Text )

(Text with Mohanbodhini Hindi commentary)

Edited with own sufficient
Notes & translation

By
Dr. Shrikrishna 'Jugnu'
Prof. Bhanvar Sharma

CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE
VARANASI

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-

**Publisher** : Chowkhamba Sanskrit Series Office, Varanasi
**Printer** : Chowkhamba Press, Varanasi
**Edition** : First, 2016

ISBN : 978-81-7080-474-1

© Dr. Shrikrishan 'Jugnu'

**CHOWKHAMBA SANSKRIT SERIES OFFICE**
K. 37/99, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin)
Post Box No. 1008, Varanasi-221001 (India)
Phone : Office : 0542-2333458,
Res. : 0542-2334032 & 2335020
Fax : 0542-2333458
E-mail : cssoffice01@gmail.com
Website : www.chowkhambasanskritseries.com

Also can be had from :
**CHOWKHAMBA KRISHNADAS ACADEMY**
K. 37/118, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin), Post Box No. 1118
Varanasi-221001 (India)
Phone : 0542-2335020

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE

अलख, आनन्द, लक्ष्मी
अध्यात्म गुरु एवं माता-पिता की पुण्य स्मृति में
पुराण शास्त्र के अनुवाद का यह पुष्प.....

- भँवर शर्मा

परम श्रद्धेय पिताश्री व सद्गुरु नित्यलीलालीन
**पण्डितप्रवर श्रीमद् मोहनलालजी चौहान**
की पुण्यस्मृति में....

- श्रीकृष्ण

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE

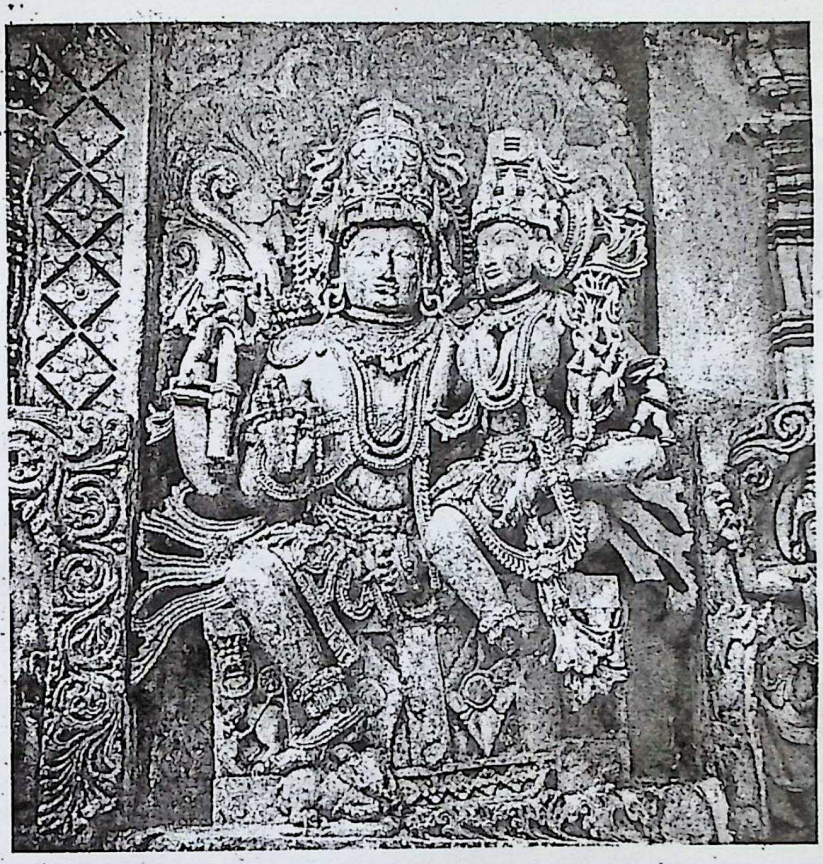

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-I

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE

# पुरोवाक्

शिव की महिमा अनेकानेक शास्त्रों में अनेकविध, नाना स्वरूपों में मिलती है। वे आशुतोष हैं और सर्वसहाय देवता के रूप में स्वीकार्य रहे हैं। उपनिषदों का वचन है कि जो अपनी स्वरूपभूत विविध शासन-शक्तियों के द्वारा समस्त लोकों पर शासन करता है, वह रुद्र एकमेव हैं अतएव मनीषियों ने जगत के कारण को निश्चित करते हुए अन्य किसी का आश्रय नहीं लिया और यह जान लिया कि वही समस्त जीवों के भीतर विद्यमान हो रहा है, निखिल लोकजगत की रचना करके उनकी सुरक्षा करने वाला परमेश्वर प्रलयकाल में इन सबको अपने में उपसंहारित कर लेता है—

**एको हि रुद्रो न द्वितीयाय तस्थुर्य इमाँल्लोकानीशत ईशनीभिः।**
**प्रत्यङ्जनास्तिष्ठति सञ्चुकोचान्तकाले संसृज्य विश्वा भुवनानि गोपाः॥**

*(श्वेताश्वतरोपनिषद् 3, 2)*

यही नहीं, उपर्युक्त अवधारणा को आत्मसात करके प्रज्ञापुरुषों ने उनको इस रूप में प्रणाम किया कि वे रुद्र उमापति हैं, वे ही समस्त कायाओं में जीवात्म स्वरूप से प्रविष्ठ-प्रतिष्ठ होते हैं, इसलिए सर्वथा प्रणम्य हैं। प्रसिद्ध एक अद्वितीय रुद्र ही पुरुष है, वे ब्रह्मलोक में ब्रह्मा के स्वरूप में, प्रजापति लोक में प्रजापति के स्वरूप में, सूर्यमण्डल में वैराट के स्वरूप में तथा देह में जीव स्वरूप में स्थिरीभूत हुए हैं, वे रुद्र सच्चिदानन्दात्मक स्वरूप हैं और इसी अर्थ में पुनः पुनः प्रणम्य हैं; निखिल चराचरात्मक जगत जो वर्तमान है, था और आगे भी रहेगा, वह सब प्रपंचीभूत रुद्र की सत्ता से पृथक् हो ही नहीं सकता, यह सब कुछ रुद्र ही है, इस रूप में वे प्रणम्य हैं—

सर्वो वै रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः सन्महो नमो नमः। विश्वं भूतं भुवनं चित्रं बहुधा जातं जायमानं च यत्। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु।

### *शिव की शास्त्रसत्ता और शिवधर्मोत्तर :*

अनेकानेक शास्त्रों का प्रणयन उनके सदास्मितमुखारविन्द से हुआ है। वेदों, ब्राह्मणों से लेकर क्रियानुष्ठानमूलक ग्रन्थों, प्रस्तुतिपरक और शिल्प-स्थापत्य सम्मत शास्त्रों में भी शिव के बहुविध प्रसंग रचे और सम्पादित किए गए हैं। यह शिव की

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-



सर्वत्रगोचर सत्ता का सुपरिभाषित स्वरूप है। उनके सद्योजात, वामदेव, महाघोर, तत्पुरुष और ईशान इन पाँचों ही मुखों से लोकोपयोगी शास्त्रों का प्रवर्तन हुआ है—

**सद्योवाममहाघोरपुरुषेशानमूर्तयः।**
**प्रत्येकं पञ्चवक्त्रास्त्युस्तैरुक्तं लौकिकादिकम्।**

*(कामिकागम पूर्व. 3, 18-19)*

ऐसे शैवधर्मसम्मत शास्त्रों में शिवधर्मोत्तर को पुराण के रूप में आदर प्राप्त रहा है। आधुनिक विद्वानों ने इसको शास्त्र के रूप में भी परिभाषित किया गया है। इसके मूल में कारण है कि स्वयं इसी ग्रन्थ में आया है— शिवधर्मोत्तरं नाम शास्त्रं ईश्वरभाषितम्। किन्तु, यह अगस्त्य-स्कन्द के संवाद के रूप में उपलब्ध है। कामिकागम में शिवधर्मोत्तर का प्राचीनतम सन्दर्भ मिलता है। उसके तन्त्रावतार पटल में जिस ऋषि ने जिस विद्या-शास्त्र को रचा अथवा प्रचारित किया, उनकी विस्तृत सूची मिलती है। यह पटल भारतीय शास्त्रों की उपलब्धता व उनके प्रसारित-प्रचारित होने के सन्दर्भ की दृष्टि से अति ही मूल्यवान है। क्योंकि, इसमें परा-अपरा भेद से शिव प्रकाशक ज्ञान और शिवज्ञान की सूचियाँ हैं। इनको भी लौकिक, वैदिक और आध्यात्मिक तथा अतिमार्गी, मन्त्र नामक और तन्त्रसम्मत भेदों में विभाजित किया गया है। यही नहीं, इसमें शास्त्रों को आपाद शिरस् स्वरूप में भी आकल्पित किया गया है। इसमें नृसिंह से प्राप्य सोमभेद नाम से जिन ग्रन्थों का उल्लेख है, वे पाँच प्रकार के बताए गए हैं और इनमें ही शिवधर्मोत्तर को स्वीकार किया गया है—

**नृसिंहः प्राप्तवान् सोमोद्भेदः पञ्चविधो भवेत्।**
**शिवधर्मोत्तरं चैव वायुप्रोक्तं तथैव च॥**
**दिव्यप्रोक्तमथैशानं शर्वोद्गीतं विधीयते।**

(कामिकागम पूर्व. 3, 84-85)

इस सन्दर्भ के बाद, शिवधर्मोत्तर का उल्लेख शिवपुराण में आता है। पुराणकार के लिए यह बहुत सम्मानस्पद रहा है। उपमन्यु ने स्वीकार किया है कि शैवी विद्या समस्त पशुपाश का विमोचन करने वाली है। यह पंचार्थ नाम वाली है और पशुविद्या से बहिष्कृत है। इसके ग्रन्थ रूप में अन्यतम 'शिवधर्म' और 'शिवधर्मोत्तर' है, जो सर्वथा पुराण और श्रुति सम्मत हैं। शैवागम के रूप में कामिकागमादि चार प्रकार के ग्रन्थ हैं, वे शिव के प्रति विशेषकर सद्कृत्य के रूप में आदरणीय है। इनसे ही मेरे विचारों की पुष्टि होती है, अर्थसिद्धि होती है, उनसे ही कर्म की अन्यतम सिद्धि स्वीकार्य है—

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



अथ विद्या परा शैवी पशुपाशविमोचिनी।
पञ्चार्थसंज्ञिता दिव्या पशुविद्याबहिष्कृता॥
शास्त्रं च शिवधर्माख्यं धर्माख्यं तदुत्तरम्।
शैवाख्यं शिवधर्माख्यं पुराणं श्रुतिसम्मतम्॥
शैवागमश्च ये चान्ये कामिकाद्याश्चतुर्विधाः।
शिवाभ्यामविशेषेण सत्कृत्येह समर्चिताः॥
ताभ्यामेव समाज्ञाता ममाभिप्रेतसिद्धये।
कर्मेदमनुमन्यन्तां सफलं साध्वनुष्ठितम्॥

*(शिव. वायवीय. उत्तर. 31, 164-167)*

***अन्तःबहिर्साक्ष्यों के आधार पर प्राचीनता :***

कामिकागम और शिवपुराण में इस ग्रन्थ का सन्दर्भ सुलभ होना इसकी प्राचीनता का प्रमाण है। कामिकागम में स्मृत होने से इसकी रचना उससे पहले ही हो चुकी थी। शिवपुराण का सम्पादन 11वीं सदी तक हो चुका था और कामिकागम उससे पूर्व 8वीं तक अस्तित्व में आ चुका था। ऐसे में शिवधर्मोत्तर की रचना इनसे पूर्व की है और शिवधर्मपुराण के बाद की। हालांकि इसमें नन्दिनागरी लिपि इत्यादि के सन्दर्भ के आधार पर स्वीकारा जा सकता है कि परवर्तीकाल में सम्पादित भी किया गया था किन्तु यह भाषा भी इसी काल में नान्देड़, विजयनगर आदि क्षेत्रों के अभिलेखों में मिलनी आरम्भ होती है।

प्रस्तुत ग्रन्थकार अक्षरों को सम्पूर्ण अवयवों सहित लिखने का निर्देश करता है, अक्षरों में मात्रा, अनुस्वार, ह्रस्व-दीर्घादि लक्षणों का उचित प्रयोग करने और पुस्तक की पूजा करने पर भी जोर देता है। अग्निपुराण की भाँति ही शिवधर्मोत्तर पुराणकार पुस्तक की यात्रा आयोजित करने, पुस्तक को गजादि पर प्रतिष्ठित कर उसे ऐसे स्थल पर स्थापित करने का निर्देश करता है जिस पर शिवयन्त्र हो। उस स्थल के स्थापत्य का वर्णन भी करता है—

सम्पूर्णावयवैस्निग्धे नाति विच्छिन्नसंहतैः।
मात्रानुस्वारसंयोग ह्रस्वदीर्घादि लक्षणैः॥
नन्दिनागरकैवर्णैः लेखयेत् शिवपुस्तकम्।
सम्पूज्येत्पूर्वं विधिना पुनः पूजां प्रकल्पयेत्॥

*(शिवधर्मोत्तर. 2, 41-43)*

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS



शिवधर्मोत्तर के द्वितीय अध्याय में देशी भाषा (स्थानीय बोली) का महत्वपूर्ण सन्दर्भ आया है और कहा गया है कि जो शिष्य संस्कृत और प्राकृत का अनुकरण करता है, वह सीखा हुआ होता है किन्तु जो देशभाषा में उपाय करना जानता है, वह गुरु होता है। यह भी कहा गया है कि विद्यादान करने वाला शिवात्मक होता है, विद्यादान महादान है और यह समस्त दानों में उत्तमोत्तम है, जो शिष्यों और शिवभक्तों का शिवविद्या के अनुसार प्रतिबोधन करता है, वह विद्यादान है—

**अथ विद्याविदे दाता विद्यात्मानं शिवात्मकम्।**
**तस्यादानं महादानं सर्वदानोत्तमोत्तमम्॥**
**अध्याप्य यजनैश्शिष्याञ्छिवभक्तान्प्रबोधेयेत्।**
**शिव विद्यानुसारेण विद्यादानं तदुच्यते॥**
**संस्कृतैः प्राकृतैर्व्वाक्यैः यश्शिष्यमनुरूपतः।**
**देशभाषाद्युपायैश्च बोधयेत् स गुरुस्मृतः॥**
**यथा शिवस्य नेवान्तः सम्पूर्णस्य महात्मनः।**
**तथा विद्या प्रदानस्य नान्तस्सर्व गुणात्मनः॥**

*(तुल. व्रतखण्ड प्रथम अध्याय पृष्ठ 235-236)*

इसी मत और लिपि की महत्ता को हेमाद्रि ने उद्धृत किया है। पण्डित हेमाद्रि (1260-71 ई.) के चतुर्वर्ग्गचिन्तामणि ग्रन्थ में कहा गया है कि 'लिपि विधात्रा लिखिता जनस्य भाले विभूत्या परिमृत्य दुष्टाम्। कल्याणिनीमेष्ष लिखत्यथैनां चित्रां प्रमाणी कुरुते विधिश्च॥' हेमाद्रि ने नन्दिनागरी लिपि की महत्ता के लिए जो श्लोक दिए हैं, वे शिवधर्मोत्तर सहित देवीपुराण में उपलब्ध होते हैं। हेमाडपंत नाम से ख्यात पंडित हेमाद्रि ने इसके कतिपय श्लोक दानादि प्रसंग में उद्धृत किए हैं और कुछ ऐसे श्लोक भी चतुर्वर्ग्गचिन्तामणि में उद्धृत हैं जो स्कन्दपुराण के बताए गए हैं किन्तु उसके वर्तमान पाठ में नहीं मिलते हैं, ऐसे में वे स्कन्दपुराण के पूर्ववर्ती, सम्भवतः संहितात्मक पाठ में रहे होंगे जो उस समय कदाचित विद्यमान हो और उनको बाद में शिवधर्मोत्तर में सम्मिलित किया गया अथवा दोनों के ही लिए ये अन्य किसी स्रोत से लिए गए हों। पण्डित हेमाद्रि देवगिरि के शासक यादव, नारायण प्रौढ प्रताप चक्रवर्ती रामदेव या रामचन्द्र राव का करणाधिप रहा और अपने काल का उद्भट विद्वान था, उनके योगदान का एक शिलालेख पंढरपुर में शक 1195 का मिला है। उनके सम्बन्ध में एक शिलालेख में कहा गया है— सा सम्पत्तदिदं यशो बलमिदं सोथं प्रतापो महानेकैकं पृथिवीभृतो भुवि महादेवस्य लोकोत्तरम्। यस्य श्रीकरणाधिपः स्वयमयं हेमाद्रिसूरिः

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



पुरः प्रौढप्रातिभवर्ण्यमानविलसद्वंशो भृशं शोभते॥ *(हेमाद्रि ऊर्फ हेमाडपंत : केशव आप्पा पाध्ये, पुणे, 2008, पृष्ठ 199)* हेमाद्रि ने अपने निबन्ध ग्रन्थ के लिए उपस्कार ग्रन्थ के रूप में शिवधर्मोत्तर का आश्रय लिया है। इससे पूर्व याज्ञवल्क्यस्मृति के टीकाकार अपरार्क (1100-1130 ई.) ने एक स्थान पर शिवधर्मोत्तर के मत को उद्धृत किया है। इससे यह स्पष्ट है कि हेमाद्रि से पूर्व अपरार्क के काल से पूर्व तक यह ग्रन्थ प्रामाणिकता के लिए प्रसिद्धि अर्जित कर चुका था और जनोपयोगी विविध प्रसंगों में प्रमाण के लिए इसके श्लोकों को उद्धृत और प्रस्तुत किया जाने लगा था। यह इसकी प्राचीनता और सर्वप्रियता का उदाहरण है जो उससे पूर्व लगभग चार सौ वर्षों की अवधि में रही है।

### *उत्तरवर्ती धर्मपुराण के रूप में ख्याति :*

यह उत्तरपुराणों की कोटि का ग्रन्थ है, क्योंकि विष्णुधर्मोत्तरपुराण के काल (500-600 ई.) से ही उत्तरपुराणों की जो परम्परा देखने में आती है, उसी क्रम में शैवरचनाकारों द्वारा इसका नामकरण किया गया लगता है। वैष्णव और शैव ही नहीं, सौरधर्मावलम्बियों ने भी इस तरह से नामकरण का आश्रय लिया है। कालमाधवादि में सौरधर्मोत्तरपुराण का सन्दर्भ भी मिलता है। यह परम्परा भविष्योत्तर तक देखने को मिलती है। यह भी प्रतीत होता है कि पुराणों के समानान्तर विषयों को ग्रहण करते हुए धार्मिकों को समय-समय पर इस प्रकार की रचनाओं की आवश्यकता अनुभव हुई और ग्रन्थों का प्रणयन हुआ। यह समय उत्तर-गुप्तकाल स्वीकार्य प्रतीत होता है क्योंकि इसी काल में बौद्धमत के क्षरण के साथ ही वैष्णवों, शैवों, शाक्तों और सौरों का अपूर्व अभ्युदय दिखाई देता है। भारतीय समाज में इन मत-सम्प्रदायों का अप्रत्याशित प्रचार-प्रसार दिखाई देने लगता है। यह प्रभाव ग्रन्थों के समानान्तर प्रासाद और शिल्प-स्थापत्य में भी लक्षित होता है। अधिकाधिक जन समुदाय को अपनी ओर आकर्षित करने के ध्येय से पूजोपासना की पद्धतियों का भी सरलीकरण होता गया और न केवल भारतीय बल्कि यहाँ आगन्तुकों को भी अपने प्रभाव क्षेत्र में लिए जाने के बहुतेरे प्रयास होते रहे। इस दृष्टि से शिवधर्मोत्तर की विषयवस्तु को भी देखा जा सकता है।

शिवधर्मोत्तरपुराण के अद्यावधि अप्रकाशित होने से इसके स्वरूप को लेकर उहापोह की स्थिति ही रही है। इसके सम्बन्ध में दो सूचनाएँ अब तक ज्ञात है। एशियाटिक सोसायटी, कोलकाता में शिवधर्म नाम से जो पुराण की पाण्डुलिपियाँ हैं, उनमें से प्रथम मातृका नेवारी लिपि में हैं। इसमें कुल 8200 श्लोक परिगणित हैं। हालांकि इस मातृका के नाम से छह ग्रन्थ हैं— 1. शिवधर्म, 2. शिवधर्मोत्तर, 3.

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS



शिवधर्मसंग्रह, 4. उमा-माहेश्वर संवाद, 5. शिवोपनिषद् एवं 6. उत्तरतन्त्र। उक्त अध्यायों के आधार पर यह स्पष्ट है कि इस पुराण में शिवभक्ति, शिवपूजन, शिवलिंगार्चन विधि, शिवलिंगोत्पत्ति, प्रासाद, शान्ति, दान, शिवलिंगमहाव्रत, उपवास, गोदान एवं शिवाश्रम जैसे विषयों का विवेचन है।

एशियाटिक सोसायटी के उपाध्यक्ष महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने प्राकृत एवं संस्कृत ग्रन्थों की जो सूची 1915 में तैयार कर प्रकाशित करवाई, उसमें नेपाल दरबार लाइब्रेरी में विद्यमान इसकी पाण्डुलिपियों की सूचना है। इसके अनुसार (3) 393 क्रम में शिवधर्म की दो प्रतियाँ हैं। ये पाण्डुलिपि साढ़े 22 गुणा 2 इंच के आकार पर है और कुल पत्र 285 हैं जिनमें पाँच-पाँच पंक्तियाँ प्रत्येक पत्र पर हैं और नेवारी लिपि में कुल 9000 हजार श्लोक हैं। अध्यायों का विवरण इस प्रकार है—

पत्र 41 (1). 12 अध्याय — इति शिवधर्म।

पत्र 52 (2) 12 अध्याय — इति शिवधर्मोत्तर समाप्त।

पत्र 59 (3) — इति शिवधर्म संग्रह समाप्त।

पत्र 32 (4) — भगवतो गीतपुराणे धर्मगुह्ये राजेन्द्रमोक्षणं उमा-माहेश्वर संवादे एकविंशतितमोऽध्यायेः।

पत्र 24 (5) उत्तरोत्तर।

पत्र 19 (6) इति शिवोपनिषद।

पत्र 46 (7) बृषसारसंग्रह समाप्त।

पत्र 12 (8). 16 अध्याय— पदपुत्रिका। *(पॉम लीफ एण्ड सेलेक्टेड पेपर्स मैन्यूस्क्रीप्ट बिलोगिंग टू द दरबार लाइब्रेरी नेपाल : महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री, एम. ए., सी. एल. ई, वाल्यूम 2, बेपटिस्ट मिशन प्रेस, कोलकाता 1915, पृष्ठ 86-87)*

यह पाण्डुलिपि आषाढ़ शुक्ला तृतीया, नेपाल संवत् 189 तद्नुसार 1069 ई. की है। इसके अन्त में यह भी आया है कि शंकर नामक महाराज के काल में धर्म के आश्रय, सद्कुल में जन्मे गुणप्रिय राघव नामक सिद्ध ने इस समग्र शिवधर्मशास्त्र को लिखा—

**नवोत्तरराशीतियुते$_{189}$ शतेऽब्दे आषाढ शुक्लस्य तिथौ तृतीये।**
**श्रीशङ्कराख्ये जयति क्षीतिन्द्रे श्रीजज्वलस्योत्तरटोल्लकेयः॥**
**धर्माश्रयः सदकुललब्ध जन्मा गुणप्रियो राघव सिद्धनामा।**
**ज्ञानप्रकाशं शिवधर्मशास्त्रं शुभप्रतिष्ठं कृतयान् समग्रम्॥**

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



कर्तुरेतेन पुण्येन भूयात् लक्ष्मीरनुत्तरा।
त्रैलोक्यपूजितं शैव वाक्यं जयति सर्वदा॥

इसके नाम से ही स्पष्ट है कि यह शैवधर्म का उत्तरवर्ती पुराण है, इसमें कहा गया है— शिवमादौ शिवं मध्ये शिवमन्ते च सर्वदा। अर्थात् इसमें शिव ही आदि में, मध्य में और शिव ही अन्त में सदा विद्यमान है। उक्त वर्णन के परिप्रेक्ष्य में जब प्रस्तुत लेखक ने इसके पाठ का अनुसन्धान किया तो तेलुगु और नेवारी लिपि में पाठ उपलब्ध हुआ। इस उपलब्ध पाठ की यदि समीक्षा करें तो ज्ञात होता है कि शिवधर्मोत्तर अधिकांशतः संवाद शैली की अपेक्षा सीधे-सीधे ही लिखा गया है। इसमें कुल 12 अध्याय है और गद्य सहित मिलाकर लगभग 2000 श्लोक हैं। पुराण के अध्यायों का स्वरूप उनके अन्त में उपलब्ध पुष्पिकाओं के क्रम से इस प्रकार ज्ञात होता है —

1. गोषडङ्गविधिर्नाम प्रथमोऽध्यायः। (कुल श्लोक 150)
2. विद्यादानफलं नाम द्वितीयोऽध्यायः। श्री साम्ब सदाशिवार्पणमस्तु। (कुल श्लोक 196)
3. पञ्चमहायज्ञगुणाध्यायो नाम तृतीयोऽध्यायः। (कुल श्लोक 88$^{1/2}$)
4. सत्पात्रं गुणं नाम चतुर्थोऽध्यायः। (कुल श्लोक 199$^{1/2}$)
5. शिवसङ्गत्य नाम पञ्चमोऽध्यायः। (कुल श्लोक 153)
6. पापभेदं नाम षष्ठोऽध्यायः। (कुल श्लोक 101)
7. नरकविशेषनाम सप्तमोऽध्यायः। (कुल श्लोक 253)
8. संसारप्रसवाख्यानं नामाष्टमोऽध्यायः। (कुल श्लोक 235)
9. स्वर्ग-नरकचिह्नो नाम नवमोऽध्यायः। (गद्यपाठ एवं लगभग 10 श्लोक)
10. ज्ञानयोगो नाम दशमोऽध्यायः। (कुल श्लोक 198)
11. प्रायश्चित कथनं नामैकादशोऽध्यायः। (कुल श्लोक 187$^{1/2}$)
12. पातालादि शिवलोकपर्यन्तानां लोकानां निरूपणं तत्र विशेषतो गोलोकवर्णनं द्वादशोऽध्यायः। (अतिभागो न विद्यते, पाण्डुलिपि अपूर्ण, श्लोक लगभग 247)

यथास्थान इसमें बारहवें अध्याय में अगस्त्य उवाच के रूप में निम्न श्लोक है— श्रुत्वैतत्परं गुह्यं गवां देह समुद्भवम्। ब्रह्मकूर्चस्य माहात्म्यंमगस्त्य पुनब्रवीत्॥ इसी प्रकार प्रथम अध्याय के आरम्भ में 'स्कन्दागस्त्य संवाद रूप षडक्षरमन्त्रप्रभावं' आया है, इससे यह ज्ञात होता है कि यह स्कन्द और अगस्त्य के संवाद रूप में आरम्भ हुआ

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS



है। तेलुगु लिपिकार ने अधिकांश अध्यायों के अन्त में साम्बसदाशिवार्पणमस्तु लिखा है, इससे ध्वनित होता है कि उक्त मातृका दक्षिण भारत में कहीं तैयार हुई।

इसका आरम्भ इस प्रकार होता है—

**शिवमस्तु सर्वजगतां परहितनिरता भवन्तु भूतगणाः।**
**दोषाः प्रयान्तु शान्ति सर्वत्र सुखी भवन्तु सकललोकाः॥**
**ज्ञानशक्तिधरं शान्त कुमार शङ्करात्मजम्।**
**देवारिसूदनं स्कन्दमगस्त्य परिपृच्छति॥**

*(शिवधर्मोत्तर. 1, 1-2)*

प्रसिद्ध पुराणवेत्ता प्रो. राजेन्द्रचन्द्र हाजरा ने शिवधर्मोत्तर पर एक विस्तृत परिचयात्मक आलेख लिखा था जिसका प्रकाशन उनके अभिनन्दन ग्रन्थ में भी हुआ है। यह प्रस्तुत ग्रन्थ में सश्रद्ध उद्धृत किया जा रहा है। इसमें इसकी उपलब्ध और सूचित-संकेतित प्रतिलिपियों, पाण्डुलिपियों से लेकर विविधानेक प्रमाणों को दिया गया है। उनको यहाँ दोहराना उचित नहीं होगा किन्तु यह स्वीकारना होगा कि शैवधर्म सम्मत ग्रन्थों में इसको प्रतिलिपित करके रखने की परम्परा रही है। यह शिवधर्मपुराण के आगे संयुक्तकर रखा जाता था। प्रस्तुत पाठ को अड्यार लाइब्रेरी, मद्रास में विद्यमान पाठ के आधार पर सम्पादित किया गया है किन्तु संशोधन के लिए पूर्वा-पर अनेक ग्रन्थों के श्लोकपाठों से तुलना की गई है। स्थल-स्थल पर यह प्रयास देखने को मिलेगा।

### *शिवधर्मोत्तर के कतिपय विशिष्ट स्थल :*

इस पुराण की विषय-वस्तु पूर्व में इसके अध्यायों के रूप में प्रतिपादित की जा चुकी है और अन्यान्य विषय इसमें द्रष्टव्य है। इस पुराण में तत्कालीन सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और राजनीति परम्पराओं की सुन्दर झांकी है। शिवधर्मोत्तरकार दानादि के सम्बन्ध में शिवालयों के अर्थ में दानादि वस्तुओं के फलाफल के सम्बन्ध में भी कहता है। इनमें छत्रदान, वस्त्रदान, शिबिका या पालकी दान, शय्यासनदान, वाटिका निर्माण आदि मुख्य हैं—

**छत्रदानेन गच्छन्ति यथा यान्द्रेण देहिनः।**
**दिव्यवस्त्रपरिधानाः यान्ति वस्त्रान प्रदाय सः॥**
**शिबिकायाऽऽभयदानेन स रथेन सुखं व्रजेत्।**
**शय्यासन प्रदादेन सुख यान्ति सविश्रमाः॥**

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



**आरामकर्ताश्चायासु शीतकासु सुखं व्रजत्।**

(शिवधर्मोत्तर. 7, 7-9)

यही नहीं, इसमें गोधन की महत्ता आई है। शिवसाधकों के मठादि में गोशालादि के निर्माण की विधि इसमें आई है। गोधन की महत्ता इसमें उस काल की प्रमुख विशेषता के रूप में दिखाई देती है। पुराणकार गोधन के नष्ट होने पर कृषि के नष्ट होने की बात कहता है, आँधी की प्रबलता पर भी इसी आशंका को व्यक्त करता है —

**गावोनष्टाः कृषिर्भग्नाः वातश्च प्रबलायते।**
**आधामि प्राहुणिकाः प्राप्ताः भग्नछिद्रं च मे गृहम्॥**

(शिवधर्मोत्तर. 8, 170)

अनेक प्रकार के अपराधों का इसमें स्मरण हुआ है, यह उस काल के समुदाय की दशा का परिचायक है। लोग राजभय से भी नहीं डरते थे, ऐसे में नरक का भय दिखाया जाता था। इसमें नरक का वर्णन सर्वाधिक हुआ है। यही वर्णन बाद में शिवपुराणकार के लिए भी आदर्श सिद्ध हुआ। शिवपुराणकार ने इसके वर्णन को ज्यों का त्यों ग्रहण किया है, यह कहते हुए अतिशयोक्ति नहीं होती है। ग्रन्थ में यथास्थान पादटिप्पणियों में यह स्पष्ट किया गया है। ग्रन्थकार अपने पारम्परिक कर्म के अनुसरण-अनुकरण पर जोर देता है और कहता है कि अन्य किसी का कार्य नहीं करना चाहिए क्योंकि उसमें दारुण क्लेश होता है। इसके परिणामस्वरूप मूल से कटे हुए वृक्ष की तरह उसे अवश होकर भूमि पर गिरना पड़ता है। (तत्रैव 200)

शिवधर्मोत्तर में पद्य सहित गद्यपाठ भी उपलब्ध है। यह इस ग्रन्थ के पुरातन ग्रन्थ सम्मत विशेषता है। स्वर्ग-नरक वर्णनमूलक नवाँ अध्याय इस रूप का प्रतिनिधित्व करता है। इसमें अनेक पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग हुआ है। इसमें कर्मानुसार ही फल मिलने की मान्यता है। यह फल इहलोक और परलोक दोनों में ही सम्भावित कहा गया है। इसके उपाय के लिए कहा गया है कि सदा अक्षय सुखों की प्राप्ति के लिए दान करें। इससे भोग वैसे ही समाप्त हो जाते हैं जैसे ग्रीष्मऋतु में छोटे नदी-नाले जलविहीन हो जाते हैं। (9, 5) दसवें अध्याय में ज्ञानयोग को पारिभाषित किया गया है। यह संसारचक्र से मुक्ति के उपाय के रूप में है और इसे शिवप्रकाशक ज्ञान की संज्ञा से मण्डित किया गया है। इसके प्रारम्भिक श्लोकों से विदित होता है कि उस काल में अनेक प्रकार के मत-सिद्धान्त व्यवहार में थे किन्तु पुराणकार कहता है कि वे अपने ही विचारों के विरोध में तर्क सम्मत विचार करें और ज्ञान तथा अपवर्ग के



Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS



तत्त्व के अनुसन्धान में जुट जाएँ। (10, 2) शिवशास्त्र की प्रशंसा में कहा गया है कि यह सब अर्थों का प्रकाशक, शाश्वत और मुमुक्षुजनोपयोगी है। इसमें धर्माधर्म, बन्धन और मोक्ष के उपदेश पर विचार करने का निर्देश है। (10, 12) योग और योगांगों के वर्णन के साथ मण्डलीकृत साधनाओं का सन्दर्भ साधकों के लिए उपयोगी है। योग को इसमें छह प्रकार का बताया है— प्राणायाम, प्रत्याहार, प्रतिस्थान धारणा, ध्यान, जप और समाधि। (10, 111)

ग्यारहवें अध्याय में प्रायश्चित विधि के अन्तर्गत स्कन्द ने उत्थापन, मूत्रोत्सर्ग, शौचाचार नियम, वस्त्रशौच विधि, स्थानशुद्धि, कार्दमादि शुद्धि, शाकादि की शुद्धि, जल की शुद्धि आदि बताई है। पाँच प्रकार की शुद्धि मनुस्मृति सम्मत (5, 133, 145) है। इसी प्रकार द्रव्य की शुद्धि, शिरस्नान विधि, उपवीत धारण विधि, सन्ध्याचरण के साथ ही अनेक प्रकार के प्रायश्चितों का प्रावधान है। अन्तिम बारहवें अध्याय में पातालादि अनेक लोकों का वर्णन बहुत ही रोचक है और पुराणवर्णन सम्मत है। इसमें गोलोक की सभी कामनाएँ पूरी करने वाली कहा गया है— गोमातृलोकं परमं सर्वकाम समन्वितम्। (12, 3) सप्तद्वीपा पृथ्वी का वर्णन अन्यान्य पुराणों के अनुसार ही मिलता है। प्रस्तुत पाठ में उनकी तुलना देवीभागवत और कूर्मादि पुराणों के सन्दर्भों से की गई है। ऊर्ध्वलोकों के वर्णन के बाद शिवपुर का वर्णन है और उसको विष्णु लोक से ऊपर बताया गया है। वहाँ के प्राणियों का वर्णन मिस्रादि देशों के शिल्प में मिलने वाले प्राणियों के रूपों से तुलनीय है। ईश्वर के लोक से भी ऊपर धर्मवृष की स्थिति का वर्णन है और शिवलोक और गोलोक में एकात्म बताया गया है और वहाँ विराजित रहने वाली गायों के नाम नन्दा, भद्रा, सुरभि, सुशीला और सर्वकामदा हैं। (12, 89-90)

गायों के सुभाषित इस ग्रन्थान्त की अनूठी विशेषता है। इनको चतुवर्ग्गचिन्तामणिकार ने भी उद्धृत किया है। महाभारत, बृहत्पराशरस्मृति में भी इस प्रकार के वचन मिलते हैं। इसी में गोशाला के निर्माण और उसके फल तथा प्रबन्धन का वर्णन है। प्राचीन भारत में गोशाला के निर्माण और उनके विधि-विधान के अध्ययन-अनुसन्धान की दृष्टि से यह वर्णन बहुत रोचक है। वहाँ पर बछड़ों के पालन-पोषण के प्रबन्धन का विवरण अनुकरणीय है। गोशाला में ब्रह्मादि तीनों ही देवताओं, देवियों, पंचसंघाती, विनायक, सोम, नन्दी की पूजा का निर्देश है। (12, 110-113) इसी क्रम में गाँवों में आहारगृह बनवाने का पुण्य, गोदान, वृषभदान, गोकुलदान और गोप्रशंसा है। वृषविषयक पापों का वर्णन प्रासंगिक इस अर्थ में है कि आज यह गोधन सुरक्षित नहीं है। उनकी सुरक्षा के लिए जो स्वर आज उठाया जा रहा है, उसकी पुष्टि

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



शिवधर्मोत्तर से होती है। कदाचित इसलिए राजाओं के काल में वृषभ की सुरक्षा भी गायों की तरह ही की जाती थी। बड़ौदा प्राच्य विद्या मन्दिर में विद्यमान 'गोविज्ञानम्' नामक एक ग्रन्थ मातृका (क्रमांक 13514) में इसी प्रकार का वर्णन है— इत्येवं प्रार्थ्य वृषभं पूजयित्वा विशेषतः। श्रान्ता यथा ते न क्लान्तास्तावत्कार्यमुदीरितम्॥ तन्मनःक्लेशहेतुश्च विफलाय विनिश्चितः। तस्मान्न योजयेत् श्रान्तान् वृषभान् कृषिकर्मणि॥ (जर्नल ऑफ द ऑरियण्टल इंस्टीट्यूट, बड़ौदा, मार्च-जून 1980, पृष्ठ 225)

शिवाश्रम की यात्रा का माहात्म्य शिवलोक प्राप्ति के हेतु के रूप में कहा गया है। (12, 182-183) शिवज्ञानियों के प्रति वस्त्र, कृष्णाजिन, सव्यजनभिक्षा, जल, कलश और नाना पात्र के दान के फल भी इसमें कहा गया है। इसी प्रकार शिवब्रह्मचारियों का वर्णन है और अन्त में ग्रन्थ की महिमा है।

***आभार निवेदन :***

शिवधर्मोत्तरपुराण के प्रस्तुत पाठ की मातृका की उपलब्धता के लिए अड्यार लाइब्रेरी, चैन्नई के संचालकों का अनेक-अनेक आभार स्वीकारता हूँ। यह पाठ हालांकि बहुत ही त्रुटित और खण्डित था। इसके सम्पादनकार्य में जितना श्रम और समय व्यय करना पड़ा, उससे कम श्रम व समय में इतने नवीन श्लोकों को रचा जा सकता था। यह शिवकृपा ही थी कि इसके कई श्लोक अथवा उनसे सम्बद्ध विषय अन्यान्य पुराणादि ग्रन्थों में प्राप्त हुए किन्तु इनको ढूँढ़ने में पर्याप्त परिश्रम लगा। यथास्थान उन ग्रन्थों का संकेत दिया गया है। उनके सम्पादनकर्ताओं, विद्वज्जनों का भी आभार ज्ञापित करता हूँ।

इसके अनुवाद में परमादरणीय श्रीभँवरलालजी शर्मा ने निष्काम सहायता की है। उनके प्रति आभार क्या निवेदित करूँ, वे मेरे अपने ही हैं और शिल्प ग्रन्थों की तरह इस ग्रन्थ में भी शिवस्वरूप में सहाय रहे। कई ऐसे स्थानों को उन्होंने चिह्नित किया था जो दुरूह या अस्पष्ट थे। सम्पादन के समय उन स्थलों पर विशेष श्रम करना पड़ा। कुछ स्थल ऐसे भी हो सकते हैं जो कि त्रुटित हों, किन्तु उनको अर्थ और भाव की दृष्टि से आत्मस्थ किया जाना चाहिए। अनुवाद और सन्दर्भ शोधन में ज्येष्ठ पुत्री सौ. कां. अनुभूति चौहान और अनुज श्री अरविन्द चौहान का सहयोग रहा। इसके टंकणकार्य में छोटी पुत्री अनुकृति चौहान और पुत्र गौरव चौहान ने परिश्रम किया। इस ग्रन्थ का कार्य सचमुच गिरिराजोत्थान के समान ही था, प्रभुवर श्रीनाथजी ने जो सहायता की, वह

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS



अनिर्वचनीय है। इसकी जो अच्छाइयाँ हैं, वे सब उनके अनुग्रह का ही सुपरिणाम हैं।

इसके प्रकाशन का दायित्व देश के प्रसिद्ध संस्कृत सेवी प्रतिष्ठान चौखम्बा संस्कृत सीरिज ऑफिस, वाराणसी के संचालक आदरणीय श्रीमान् ब्रजमोहनदासजी गुप्ता ने सहर्ष स्वीकार किया और बहुत सुन्दर स्वरूप में इसे लोककरवल्लभ करने का श्रम किया है। उनके प्रति अनेकशः आभार और धन्यवाद। विद्वज्जन इस स्वल्प किन्तु महत्वपूर्ण शैव ग्रन्थ का सम्मान करेंगे और शोधादि के लिए स्वीकारेंगे, श्रद्धालु इसको पारायणादि के लिए ग्रहण करेंगे, यह अपेक्षा है।

और अन्त में यही निवेदन है, इदं शिवधर्मोत्तरं नाम्नोपपुराणमब्रवीत्। षण्मुखं प्रोक्तमगस्त्यमुनिवरं प्रतिं पुरा॥ यः पठेत् शैवं सम्बद्धां यथा मर्त्यो महामतिः। शृणुयाच्छ्रावयेद्वापि स भवेत कीर्तिमान्नरः॥

पुरुषोत्तममास प्रतिपदा, वि. सं. 2072 — विद्वद्वशंवदः
17 जून, 2015 ईस्वी. — *श्रीकृष्ण 'जुगनू'*
उदयपुर (राजस्थान)

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



# THE ŚIVA-DHARMOTTARA*

This is an interesting and fairly popular work[1] awaiting

---

* JGJRI, Vol. XIII, pts 1-4, pp. 19-50.

1. In analysing this unpublished work we have chiefly used Ms. No. G. 3852 preserved in the Library of the Asiatic Society, Calcutta. This Ms. is written on palm-leaf in Newari characters 'of the twelfth century' A. D., and consists of the following six works on Saivism : (1) *Śivadharma,* (2) *Śiva-dharmottara,* (3) *Śiva-dharma-saṅgraha* (4) *Umāmaheśvara-saṁvāda,* (5) *Śivopaniṣad,* and (6) *Uttarottaratantra.*

   For further information about this Ms. See Haraprasad Shastri, *Descriptive Catalogue of Sanskrit Manuscripts in the Government Collection under the care of the Asiatic Society of Bengal* (hereinafter referred to as 'Shastri, *ASB Cat.'),* Vol. V, No. 4085, pp, 723-744.

   For other Mss. Of the *Śiva-dharmottara* See.

   (i) Shastri, ASB Cat., V. No. 4084, pp. 718-723 (Ms. No. G. 4077) which is written on palm-leaf in Newari script and contains nine different works on Saivism, of which the first six are the same as those in Ms. No. G. 3852 already mentioned, the seventh is the *Vṛṣa-sārasaṅgraha*, and the last two are both named *Lalita-vistara.* In this Ms. the eighth work, called *Lalita-vistara,* contains a post-colophon statement, which informs us that one 'Kula-putra-Ratna-siṁha' copied it in 'संवत् अदभ' (i.e. Newari year 156=1036 A. D.) during the victorious reign (vijayarajye) of 'Parama-bhaṭṭāraka-mahārājādhirāja-parameśvara-sri-Lakṣmī-kāma-deva'.

   (ii) Haraprasad Shastri, *Catalogue of Palm-leaf and Selected Paper Manuscripts belonging to the Durbar Library, Nepal,* P. 92, No. 36 (complete in 12 chapters; written in Newari script).

   (iii) *Catalogueof Sanskrit Manuscripts in the Adyar Library,* Part I, p. 158, Ms. No. 30 C 20 आ 332 (written in Andhra script).

   (iv) M. Winternitz, *Catalogue of South Indian Sanskrit Manu-*

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IK



publication. Like the *Śiva-dharma* (of which we have said elsewhere[2]) it is a short manual of religious rites and duties meant exclusively for the Śiva-worshippers. It consists of twelve chapters but is little more extensive than the *Śiva-dharma,* of which it is said to form the latter part. According to a statement made in its concluding chapter, this work was originally spoken out by Kumāra to the sage Agasti in 12000 verses dealing with Karma-yoga, Jñānayoga, and the nature of Dharma and Adharma, and, after fully comprehending its contents, Agasti spoke out its essence briefly in twelve chapters.[3] It should be mentioned here

---

*scripts (especially those of the Whish Collection) belonging to the Royal Asiatic Society of Great Britain and Ireland* (London, 1902), No. 156 (Whish No. 162), p. 214 (a palm-lealf Ms. Complete in 12 chapters and written in Malayalam of the 17th or 18th century A. D.).

(v) P. P. S. Sastri, *Descriptive Catalogue of the Sanskrit Mss. in the Tanjore Maharaja Serfoji's Sarasvati Mahal Library* (Tanjore), Vol. XV, p. 7156, Nos. 10555-6 (complete in 12 chapters and written in Devanāgari Script).

(vi) A. C. Burnell, *Classified Index to the Sanskrit Manuscripts in the Palace of Tanjore* (London, 1880) p. 195 (complete in 12 chapters; written in Devanāgari).

(vii) R. L. Mitra, *Notices of Sanskrit manuscripts,* VI, pp. 272-4, No. 2208 (containing the *Śiva-dharma* and the *Śiva-dharmottara; written in Bengali script).*

(viii) G. Buhler, *Detailed Report of a Tour in Search of Sanskrit Mss. Made in Kashmir, Rajputana and Central India* (*JBBRAS*, Extra Number, 1877), p. vii.

For small treatises claiming to belong to the *Śivadharmottara* see.

(i) Shastri, *ASB Cat.,* V, p. 830, No. 4174A, Ms. No. G. 5628 (written in 'Udiya of the nineteenth century' and dealing with Vratas).

(ii) *A. B. Keith,* catalogue of the Sanskrit and Prakrit Mss. in the Library of the India Office *(London), II, ii, p. 1000 (a section on Umā-maheśvara-vrata).*

2. For our article one the *Śiva-dharma see Journal of the Ganganatha Jha Rsearch Institute* (Allahabad), X, 1852-53, pp. 1-20.

3. The relevant verses are the following.

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



that of this revised work, which has come down to us in Mss., Chap. 9 is composed mostly in prose.

The *Śiva-dharmottara* calls itself a 'Śastra' or 'Āgama' on several occasions[4] but not a 'Purāṇa' or 'Upapurāṇa' even once; it has none of the Puraṇic characteristics; and its name does not occur in any of the numerous lists of eighteen Upapurāṇas[5] known to us. Yet it came to be recognized as on Upapurāṇa, probably because of its title which connects it with the *Śiva-dharm* as the latter part of that work.

Beginning with a salutation to Śiva, called Hara, who bears on his head a crescent moon, has around his neck a snake and a garland of white skulls, and carries in his hand a trident with which he pierced the demons, the *Śiva-dharmottara* states that as Skanda[6] has heard the various kinds of Dharma (religious

---

उक्तं द्वादशसाहस्री (? स्रं) शिवधर्मोत्तरं महत्।
अगस्तये मुनीन्द्राय कुमारेण महात्मना।
इतीह कर्मयोगस्य ज्ञानयोगस्य तत्त्वतः।
धर्माधर्मगतीनां च स्वरूपमुपवर्णितम्।
इत्येतदखिलं बुद्ध्वा संक्षिप्यागस्तिरब्रवीत्।
द्वादशाध्यायसंयुक्त मिति सारं विमुक्तिदम्।
शिवधर्मोत्तरं शास्त्रं..... Chap. 12 (fol. 88a).

4. See, for instance, the following lines :
*'Śivadharmottaram nama śāstram īśvara bhāṣitam'* –Chap.1 (fol. 40b);
*'atha dharmāḥ sivenoktāḥ śivadharmottare'* –Chap. 5 (fol. 35b);
*'Śiva dharmottarm śāstram vācayed yaḥ śṛṇoti ca'* –Chap.12 (fol. 88a).
In a second place in Chap. 12 (fol. 88a) the name *'Śivadharmottara-śāstra'*.

5. For these lists see my article in *Annals of the Bhandarkar Oriental Rsearch Institute,* XXI, 1940, pp. 39ff. See also *Padma-purāṇa,* Pātāla-khaṇḍa, 111. 94b-98; and *Vindhyamāhātmya* (claiming to belong to the *Bṛhad-auśanasaupapurāṇa)* chap. 4 (Shastri, *ASB Cat,* V, pp. 745-6, No. 4086, Ms. No. G. 8091; fol. 8a).

6. He is also mentioned in this work under the names of Kumāra and Mahāsena and is said to be a son of Śaṅkara, an annihilator of the enemies of gods, and the possessor of knowledge and power (Jñānaśaktidhara)-See verse 2 of Chap. 1.

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IK



duty) described by Śiva to Devī, Agasti requested him to speak 'briefly' *(saṁkṣepāt)* on 'Śiva-dharma' (religious rites and duties relating to Śiva) including Liṅga-worship, donation especially of books *(vidyādāna),* performance of various pious acts which entitle people to practise Śaiva Yoga, performance of the five Great sacrifices *(mahāyajña)* viz., Karmayajña, Tapo-yajña, Svādhyāya-yajña, Dhyāna and Jñāna-yajña, signs of pious men and sinners, and so on. Consequently, Skanda spoke out "the Śastra named *Śiva-dharmottara* (which was originally proclaimed by Īśvara (i.e. Śiva)".[7]

Thus, laying claim to a divine origin and introducing its contents in the first fifteen verses, the *Śiva-dharmottara* goes on to describe the religious duties to Śiva. It praises Śraddhā (faith) as the first principle of life and as the best type of Tapas (austerity), and stresses upon its importance in the apprehension of the subtle *(sūkṣma)* Dharma which leads to final release. It lays down the characteristic features of a Mantra (which is to consist of only a few syllables, to be easy of pronunciation, to have great significance, to be capable of leading to final liberation, and so on), and praises the sis-syllabled Mantra 'oṁ namah śivaya', which is said to be the seed *(bīja)* or essence of all sciences *(sarva-vidyānām)* and to be expressive of Śiva described as 'pañca-brahma-tanu' and the cause of liberation. According to it, "the sixs-yllabled Mantra remains in the both the Veda and the Śivāgama [and] in the mouth of the good, and among the people [at large] it is remembered as consisting of five syllables."[8]

By way of praising faith in the words of Śiva and glorifying a spiritual guide who explains and preaches these words, the *Śiva-dharmottara* enjoins upon the Śaiva teachers the highly important duty of imparting instructions ofn Śiva-dharma to kings as well as commoners. The former are to be convinced by means of 'the eight-limbed discourse' *(aṣṭāṅga-vādena)* on Śiva and to be won over first to the practice of Śiva-dharma and then gradu-

---

7. For the relevant line see foot-note 4 above.
8. *Śivadharmottara,* Chap. I (fol. 41b)-

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



ally to (Śaiva) Jñāna-yoga; and a wise Śaiva, who can enlighten a king given to sensual pleasures and acquisition of wealth and win him over to Śiva-dharma and Jñāna-yoga, is said to be known and respected as a universal teacher *(jagadguru)*[9]. A king in his turn, who, being himself attracted to Śiva-worship, encourages his subjects and other kings to practise Śiva-dharma, is said to be able to enjoy the various benefits accruing from this pious acts. As to the method of spreading Śiva-dharma among the common people the *Śiva-dharmottara* says that the Śaiva teachers are to propagate his Dharma among them by terrifying or tempting the illiterate and by influencing the greedy by means of spells, medicines, mystic rites, etc.[10]

After devoting a good number of verses of the praise of imparting instructions to kings, the *Śiva-dharmottara* distinguishes between good and bad speech, saying that those words which though sweet and polished, excite passion, hatred, anger, and similar other feelings and thus cause rebirths and lead to hell by creating nescience are really bad and vulgar, but fine words are those which, in spite of their being unattractive, create virtue, and destroy passion and other feelings which cause bondage.[11] As to

---

9. Ibid., chap. 1 (fol. 42a)-
   मन्त्रौषधिनिधिक्षेत्रबिलमूलरसक्रियाः।
   धर्ममार्गावताराय वादोऽष्टाङ्गः प्रकीर्तितः।।
   प्रत्याय्याष्टाङ्गवादेन कामार्थाभिरतं नृपम्।
   शनैर्धर्मे नियुञ्जीत ज्ञानयोगे पुनः क्रमात्।।
   एवं यः सर्वयत्नेन राजानं बोधयेद् बुधः।
   जगद्गुरुः स विज्ञेयः सर्वलोकानुकम्पकः।।
10. Ibid., chap. 2 (fol. 42a)-
   उपायेन भयाल्लोभात् मूर्खान् सदानुबोधयेत्।
   मन्त्रौषधिकियाद्यैर्वा लुब्धान् धर्मे निवेशयेत्।।
11. Ibid., chap. 2 (fol. 42a)-
   रागद्वेषानृतक्रोधकामतृष्णानुसारि यत्।
   वाक्यं निरयहेतुत्वात् तद् दुर्भाषितमुच्यते।।
   संस्कृतेनापि किं तेन मृदुना ललितेन च।
   अविद्यारागवाक्येन संसारक्लेशहेतुना।।
   यच्छ्रुत्वा जायते पुण्यं रागादीनां च संक्षयः।
   विरूपमपि तद् वाक्यं विज्ञेयमतिशोभनम्।।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IK



the necessity of the study of Śāstras in life the *Śiva-dharmottara* says :

"The Purāṇa, the Bhārata, the Vedas, and the highly extensive Śāstras—all these are destructive of longevity, [because] Dharma [to be derived from them] is scanty, [whereas] there is a [great] extent and multiplicity of works."

"The great burden of sons, wives, etc. to perfectly infatuated persons, and that of Śāstras to learned people, - both of these are harmful to the practice of [really] beneficial Yoga."

"One who wants to know everything, thinking 'This has to be known', 'This has to be known', does not get to the end of Śāstras, even though he may have a life of a thousand years."

"(So,) knowing the 'Akṣara-tanmātra' and the life to be extremely fickle, one should set aside the multitudes of Śāstras and perform works beneficial in the next world."

"What is the good of a scholar and an able-bodied person who are incapable of bearing the burden of virtue beneficial in the next world?"

"A person, who is unable to deliver his own self from rebirths, is a fool, even though he may be a scholar, and lacks strength, even though he may be [physically] strong."[12]

The *Śiva-dharmottara* allows the Śaiva teachers to use Sanskrit, Prakrit or any of the local dialects as a medium of reli-

---

12. Ibid., chap. 1 (fol. 42a-b)-

पुराणं भारतं वेदः शास्त्राणि सुमहान्ति च।
आयुषः क्षयणाः सर्वे धर्मोऽल्पोग्रन्थविस्तरः।।
पुत्रदारादिकं भारः पुंसां संमूढचेतसाम्।
विदुषां शास्त्रसंभारः सद्योगाभ्यासविघ्नकृत्।।
इदं ज्ञेयमिदं ज्ञेयं यः सर्वं ज्ञातुमिच्छति।
अपि वर्षसहस्रायुः शास्त्रान्तं नाधिगच्छति।।
विज्ञायाक्षरतन्मात्रं जीवितं चातिचञ्चलम्।
विहाय शास्त्रजालानि परलौकिकमाचरेत्।।
पण्डितेनापि किं तेन समर्थेन च देहिना।
यः पुण्यभारमुद्वोढुमशक्तः पारलौकिकम्।।
पण्डितोऽपि स मुर्खः स्याच् छक्तियुक्तोऽप्यशकिमान्।
यः संसारात् स्वमात्मानमुत्तारयितुमक्षमः।।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



gious instruction.[13] It extols a Śaiva teacher and calls him 'Vidyāparameśvara' (the supreme master of learning) who, being intimate with the meanings of Śaivatantras, restores the correct texts of Śaiva works made defective by time or spoiled by bad scribes and inefficient teachers in various ways, viz., by leaving out syllables or inserting new ones during copying, by wrongly reading a text, by making arbitrary changes in the text by way of correction, by separately reading the different members of a compound word, by reading the text in such a way as to create contradiction in sense or to give no sense at all, by creating serious metrical defects, and so on.[14] It then gives a detailed description of the method which is to be followed by the rich in giving away manuscripts of Śaiva scriptures copied by themselves or by scribes. According to this method, the donor has to worship Śiva, and Śaiva scripture to be copied for donation, and his spiritual guide. Next, he has to select a suitable place, in which a circular or quadrangular Vidyāmaṇḍala (i.e., a sacred piece of ground meant for keeping the book to be given away) of eight or four cubits is to be prepared with scented water mixed with cow-dung, and a lotus *(padma)* is to be painted in this Maṇḍala with white powder. Outside the lotus the Maṇḍala has to be decorated with painting of

---

13. Ibid., chap. 2 (fol. 43a)-

संस्कृतैः प्राकृतैर्वाक्यैर्यः शिष्यमनुरूपतः।
देशभाषाद्युपायैश्च बोधयेत् स गुरुः स्मृतः।।

The words संस्कृतैः प्राकृतैर्वाक्यैः may also be taken to mean 'polished or unrefined language.'

14. Ibid., chap. 2 (fol. 43b)-

शिवज्ञानस्य कालेन विनष्टस्य प्रमादतः।
ऊनातिरिक्तवर्णस्य मूढैर्दुर्लिखितस्य च।।
प्रमादाधीतपाठस्य नाशितस्याल्पबुद्धिभिः।
ज्ञानावलेपमानान्धैराचार्यैः शोधितस्य च।।
व्यस्तैः पदैरुपेतस्य पुनरुक्तस्य चार्थतः।
पूर्वोत्तरविरुद्धस्य स्वसिद्धान्तविरोधिनः।।
छन्दसातीवनष्टस्य शब्दार्थरहितस्य च।
इत्येवमादिभिर्दोषैरुपेतस्य क्वचित् क्वचित्।।
यः करोति पुनः सम्यक् संस्कारं पूर्ववद् गुरुः।
शिवतत्त्वार्थविद् धीमान् स विद्यापरमेश्वरः।।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IK



different hues and with flowers of five colours; and a white or variegated canopy is to be spread over it. This canopy is to be set with pearls and small bells and decorated with hanging threads, pearl-necklaces, balls *(kanduka),* etc. The four posts, supporting the canopy, are to be covered with coloured cloth; and there should be four pitchers strewn over with white lotuses and earthen dishes containing germinating barley and Śali grains. An ivory throne, worked with gold and gems, is to be placed and worshipped, and on this throne the holy book, frm which the copy is to be made, and the leaves, which are to be used in preparing this copy, are to be kept and worshipped with the offer of flowers, incense, etc. Then, after worshipping his spiritual guide and having his permission, the donor is to take his bath, decorate himself, and begin to prepare the copy by writing five verses at first. He is then to feed his spiritual guide, and also Brāhmaṇas, beggars, invalids and others, to ask his spiritual guide's pardon, to take his meal, and to make offerings to Gaṇas at night. Next morning, a small Vidya-maṇḍala of two cubits is to be painted with various hues, decorated with flowers, shallow earthen dishes *(śarāva)* containing germinating barely grains, etc., and covered with a canopy. The book, to be used as the original, is to be brought down from the throne, placed on a special stool called Śara-yantra, and worshipped. Thus, every day, after worshipping the holy book, the work of copying is to be continued, the script used being Nandi-nagara as described in the following verses :

"चतुरस्त्रैः शमशीर्षैर्नातिस्थूलैर्नवा कृशैः।
सम्पूर्णविभवैः स्निग्धै र्नातिविछिन्नसंहतैः॥
मात्रानुस्वारसंयोगः ( ? ग- )ह्रस्वदीर्घादिलक्षितैः।
नन्दिनागरकैर्वर्णैर्लेखयेच् छिवपुस्तकम्॥"[15]

After the copy is completed, the donor is to observe fast, worship Śiva, Agni, the religious teacher, and the newly written manuscript, and keep awake at night with various diversions such

---

15. Ibid., chap. 2 (fol. 44a)-
The fourth line is the same as *Devi-purāṇa* (Vaṅgavāsī Press ed.) 91.53a.

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



as the sounding of drums and other musical instruments, singing of songs, performance of dance, narration of stories of Śiva, recitation of Vedic texts, exhibition of attractive shows and playful performances *(prekṣaṇakaiś ca śobhanaih, krīḍāyatta-prayogādyaiḥ),* and so on. In the following morning a beautiful Vimāna (car, conveyance) is to be constructed with wood and bamboos as covered with a piece of coloured cloth, and the Śaiva work *(śiva-jñānasya pustakam)* is to be placed in it together with the stool. This book is to be decorated with paintings, furnished with leather at the side, and tied tightly with a piece of strong thread.[16] The Vimāna, with the holy book in it, is to be taken to a Śivāśrama in a chariot. Or, it may be carried there either by strong men or by an elephant, and on its way to the Āśrama it should be taken round the city in a big procession led by the king and attended with songs of females *(Strīsaṁgītaiḥ).* The persons joining the procession should include wandering singers, professional bards, Brahmanas loudly citing Vedic hymns, and females carrying beautiful chowries and singing songs. While the book is thus carried to the Āśrama, Offerings are to be made in all directions and at every step. On this occasion the citizens are to clothe themselves in white, their houses are to be decorated with flags, Brāhmaṇas are to be fed by householders, no harm is to be done to anybody, not even to trees, enemies, imprisoned through rage, are to be released,[17] and the Kaumudi (Mahotsava), though out of time, is to be observed for two days in every house.

After the book has thus been taken to the Śivāśrama, it is to be kept before the image of Śiva in sanctified place and offered to the Śaiva teacher *(guru).* For averting evils *(śāntyartha)* of cows Brāhmaṇas, kings, country-folk and townspeople, a chapter of this work is to be read out by a good reader, who is to have thorough knowledge of metres, to be a good poet, to have a

---

16. Ibid., chap. 2 (fol. 44b)-
*Pārśve carma-samāyuktaṁ dṛḍha-sūtra-nibandhanam.*
17. Ibid., chap. 2 (fol. 44b)-
*Bandhanasthāś ca moktavyā baddhāḥ krodhena śatravaḥ.*

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IK



sweet voice, to know the science of music, and to be a cultured man *(vidagdha)*. The teacher, receiving the work, is to sprinkle the king and other persons present there with the water meant for averting evils, and to mean peace to the whole world. After feeding his teacher and paying honorarium to him, the king is to dine with his attendants and the females of the harem, and the dinner is to be followed by various shows.[18]

The copy of the Śaiva work, received by the Śaiva teacher, is to be kept in a Vidya-koṣa-gṛha made with cloth, and for this Vidyā-koṣa-gṛha, a Vidyāyatana, eight cubits in length, is to be constructed with stone, bricks, earth or wood and furnished with doors, doorpanels, bolts, walls, gardens, flags, canopy, bells, chowries, etc. In this Vidyāyatana the casket containing the holy book *(vidyā karaṇḍaka)*[19] is to be placed with ceremony; and the book is to be worshipped thrice daily like Śiva himself.

In connection with the donation of manuscripts the *Śiva dharmottara* gives details of the construction of a highly beautiful, three or four-storied house *(pura)* or monastery *(maṭha)* called Śivāśrama (hermitage of Śiva) and meant for Śiva and his worshippers. This house or monastery, which is to be built on a plinth having a height of two cubits and also pillars at the sides, is to be furnished with small but beautiful caves (or cubicles) meant for those who have given themselves up to the acquirement of knowledge of Śiva. It is to have a big kitchen in the south-east with an outlet for smoke, a sacrificial hall in the east, a room for incense and flowers in the north-east, a store-room *(bhāṇḍāgāra)* in the north, a granary *(koṣṭhāgāra)* in the north-west, and a bath-room in the west with windows. In the south-west there should be

---

18. Ibid., chap. 2 (fol. 45a)-
*Kāryā ca vividhā prekṣā bhuktavatsu janesu ca.*

19. This casket, which is to be made of gold, silver, copper, bellmetal, iron, wood, bamboo, etc. and to have a lid *(pidhana)*, has other peculiarities as mentioned in the verse :
सर्वाश्मकटकोपेतं दृढसूत्रनिबन्धनम्।
कुर्यात्तालकसंयुक्तं विद्यारत्नकरण्डकम्।।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



a room for fuel, sacrificial wood, kuśa grass and weapons, and in the south there should be a safe and pleasant room meant for guests and furnished with bed, seats, foot-wears, water, fire, lamps and good servants. The intervals between the different rooms are to be decorated with groups of water-banana plants and with flowers of five hues; and outside the wall surrounding the entire mansion, there should be a good and well-arranged flower-garden, around which there should be another big outer-wall furnished with gates and door panels and surrounded by a ditch.[20] Above the third story there should be a beautifully painted lecture-hall *(vidyā-vyākhyāna-maṇḍapa)* with a Vidyā-maṇḍala in it and with windows and outlets; and in the uppermost story (?) a room *(vaḍabhī-gṛha)*, six or eight cubits in length, is to be made with beautiful cloth, and, after the ceremony of consecration of

---

20. The relevant verses of the *Śivadharmottara* (Chap. 2, fols. 46 b-47a) are the following :

यः कारयेन्महारम्यं सुवेदिसंस्थितं पुरम्।
पञ्चभौमं त्रिभौमं वा शिवज्ञानरतात्मनाम्।।
गुहाप्रवरकैर्युक्तं मैत्रस्थानसमन्वितम्।
वास्तुविद्याविभक्तं च प्राकारपरिवारितम्।।
तस्य वेदी द्विहस्तोच्चा पर्यन्तस्तम्भसंयुता।
पक्षे (? क्वे)ष्टकापरिच्छिन्ना तत्सुरम्यं भ्रमन्तकम्।।
सुवीथ्याः पुरतः कार्यं दिश्याग्नेय्यां महानसम्।
धूमनिर्गमनोपेतं पूर्वतः सत्रमण्डपम्।।
गन्धपुष्पगृहं कार्यमैशान्यां पटसंयुतम्।
भाण्डागारं च कौबेर्यां कोष्ठागारं च वायवे।।
उदकाश्रयं च वारुण्यां वातायनसमन्वितम्।
समित्कुशेन्धनस्थानं आयुधानां च नैर्ऋते।।
अभ्यागताभयं रम्यं शय्यासनसपादुकम्।
तोयाग्निदीपसद्भृत्यैर्युक्तं दक्षिणतो भवेत्।।
गृहान्तराणि सर्वाणि जलजैः कदलीगृहैः।
पञ्चवर्णैश्च कुसुमैः शोभितानि प्रकल्पयेत्।।
प्राकारान्तर्बहिर्दद्यात् पञ्चहस्तप्रमाणतः।
प्राकाराच्च बहिःकुर्यात् सर्वदिक्षु समन्ततः।।
दिव्यं शिवाश्रमारामं नानापुष्पोपशोभितम्।
सर्वर्तुकगुणोपेतं नानावृक्षसमन्वितम्।।

* * * *

स्थानविन्यासरचितैः सन्मार्गाधारसंयुतैः।
पुष्पैर्बहुविधैर्युक्तं दिग्विदिक्षु जलान्वितम्।।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



the Śivāśrama is over, an earthen, wooden or stone image of Nakulisvara Śiva is to be established in this Vaḍabhī-gṛha with due worship. According to the *Śiva-dharmottara* this Nakulīśvara Śiva is the creator (or ordainer) of all the Sciences *(vidyā);* he is omniscient and is surrounded by his disciples and grand-disciples; he has one of his hands raised in explaining the Śāstras and is seated in a particular posture called Padmāsana; he is very white, has a pleased countenance, and is a teacher.[21]

The Śivāśrama, thus constructed, is to be provided with temple-girls *(śivāyatana-yoṣitaḥ)* called 'Rudra-gaṇikās' (harlots or female Gaṇas of Rudra), who may have willfully accepted that position in life, or who may have been presented there by somebody, or purchased for the purpose, or compelled to be so as a sort of punishment, or reduced to that state per force; and the descendants of these Rudra-gaṇikās are said to attain heaven after death by dint of their mothers' virtues.[22]

Going to describe the religious duties of Śiva *(Śiva-dharma)*,[23] for which it is exclusively meant, the *Śiva-dharmottara* speaks of their ten constituent parts *(skandha)*, viz., abstention from killing or giving pain to others, toleration, truthfulness, modesty, devotion, control of the organs of senses, munificence, performance of sacrifice, muttering (of the Mantra), and

---

21. *Śivadharmottara*, chap. 2 (fol. 47a)-
    तृतीयाच्च पुरादूर्ध्वं विद्याव्याख्यानमण्डपम्।
    गवाक्षनिर्गमोपेतं विचित्रं परिकल्पयेत्।।
    पुरार्धं पञ्चमं कार्यं शिवस्य वडभीगृहम्।
    षड्हस्तमष्टदीर्घं वा चारुपट्टविनिर्मितम्।।
22. Ibid., chap. 2 (fol. 47b)-
    दत्ताः कीताः प्रविष्टाश्च दण्डोत्पन्नाबलात्कृताः।
    विज्ञेया रुद्रगणिकाः शिवायतनयोषितः।।
    या रुद्रगणिकोत्पन्ना पुत्रपौत्रादिसन्ततिः।
    सापि याति मृता स्वर्गे मातुरेवानुभावतः।।
    तत्र मृद्दारुशैलं वा स्थापयेद् विधिवच् छिवम्।
    सर्वविद्याविधातारं सर्वज्ञं लकुलीश्वरम्।।
    वृतं शिष्यप्रशिष्यैश्च व्याख्यानोद्यतपाणिकम्।
    पद्मासनस्थं सुश्वेतं प्रसन्नवदनं गुरुम्।।
23. See *ibid.*, chap. 3 (fols. 49a-50a). Also chap. 5 (fols. 53b-54a).

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



meditation, and says that the nature of enjoyment is determined by the virtue earned by the practice of Śiva-dharma.[24] It mentions the five great sacrifices *(pañca mahāyajña),* of which Karma-yajña is said to consist of worship, sacrificial rites, etc., Tapo-yajña, of austere practices such as Cāndrāyaṇa, Svādhyāya-yajña, of the repetition of the Śiva-mantra, Dhyāna-yajña, of the incessant thinking of Śiva, and Jñāna-yajña, of teaching, studying, explaining, hearing and thinking of Śaiva scriptures. Accoding to this work, worship *(pūjā)* yields nothing more than a great kingdom, and the cult of Fire *(agni-kārya)* leads one to prosperity; so, Karma-yajña is much inferior to Tapo-Yajña, which, in its turn, is far excelled in efficacy by Svādhyāya-yajña which frees one from sins. Dhyana-yajña and Jñāna-yajña, which constitute Śiva-yoga, are together capable of yielding final emancipation; but Jñāna cannot be attained without the practice of Yoga. It is only by the practice of Yoga after getting away from all kinds of attachment to objects of senses that one can attain Jñāna which causes tranquility of mind, undisturbed concentration on god, and immunity from Upadhis. Ajñāna, on the other hand, is the cause of bondage and rebirth and, consequently, of untold suffering and misery in life. It can be destroyed not by karman but by Jñāna[25] which puts a stop to all kinds of attachment to worldly objects and thus makes one go beyond the domains of virtue and vice. "A successful Yogin, who has been satiated by the nectar of Jñāna, has no duty; but if he has any, he has not known the Truth."[26] "Just as one furnished with the power of spells, is not bitten by snakes when playing with them, so also a Jñānin, though playing with the snakes in the forms of the organs of senses, is not bitten by them. As a poison, taken [by one], is assimilated through the power of spells and herbs, so also the sinful acts of those possess-

---

24. *Ibid,* chap. 5 (fols. 53b-54a).
25. *Ibid,* chap. 3 (fols. 49b).
    *Jñānena ca tad ajñānaṁ nivarteta na karmabhiḥ.*
26. *Ibid,* chap. 3 (fol. 49b).
    ज्ञानामृतेन तृप्तस्य कृतकृत्यस्य योगिनः।
    नैवास्ति किञ्चित् कर्तव्यमस्ति चेन्न स तत्त्ववित्।।



Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



ing Jñāna are digested (i. e., made ineffective) immediately [after these are done by them]."[27] As a matter of fact, "neither the holy places full of water nor the gods made of stone or earth reach those Yogins who have realized their own Self."[28] One, who realises Śaṁkara as omnipresent, finds him in his Ātman. "Persons failing to realise Śiva in their own Ātman search for him in a holy place."[29] "To those who are given to work the gods are in Fire, to the talented (sages) they are in heaven, to the unenlightened they are in images, and to the Yogins they are in their Ātman. The Yogins find Śiva in their Ātman and not in images. Due to Ājñāna, an image is worshipped for inspiring thought. One, who forsakes Śiva residing in his Ātman and worships the deity remaining outside, licks his elbow by leaving of the lump of food in his own hand."[30] So, people should try to experience the deity in their own Ātman, and for this purpose they should study the highly effective but least tiresome (works on) knowledge of Śiva in preference to the Vedas whose results are not directly perceived.[31] These people should also practice the faultless and liberating

---

27. *Ibid,* chap. 3 (fol. 50a).
यद्वत् मन्त्रबलोपेतः क्रीडन् सर्पैर्नदृश्यते।
कीडन्न दृश्यते ज्ञानी तद्वद् इन्द्रियपन्नगैः।।
मन्त्रौषधिबलैर्यद्वज् जीर्यते भक्षितं विषम्।
तद्वत् पापानि कर्माणि जीर्यन्ते ज्ञानिनां क्षणात्।।

28. *Ibid,* chap. 3 (fol. 50a).
तीर्थानि तोयपूर्णानि देवाः पाषाणमृण्मयाः।
योगिनो न प्रपद्यन्ते स्वात्मप्रत्ययकारिणः।।

29. *Ibid,* chap. 3 (fol. 50b).
*Ātmastham ye na paśyanti tīrthe mārganti te śivam.*

30. *Ibid,* chap. 3 (fol. 50).
अग्नौ क्रियावतां देवा दिवि देवा मनीषिणाम्।
प्रतिमास्वप्रबुद्धानां योगिनामात्मनिस्थिता।।
शिवमात्मनि पश्यन्ति प्रतिमासु न योगिनः।
अज्ञानाद् भावनार्थाय प्रतिमा परिपूजिता।।
आत्मस्थं यः शिवं त्यक्त्वा बहिःस्थं यजते शिवम्।
हस्ते पिण्डं समुत्सृज्य लिहेत् कूर्परमात्मनः।।

31. See *ibid,* chap. 3 (fol. 50b).
सत्यामागमवार्तायामप्रत्यक्षे च तत्फले।
अधेयमीश्वरं ज्ञानमल्पक्लेशं महाफलम्।।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



Śiva-yoga by giving up the austerities which are difficult to practise and all sacrificial rites which ae troublesome and yield scanty result.[32]

It has already been said that the *Śiva-dharmottara* subordinates Karma-yoga to Jñāna-yoga. As a matter of fact, it regards the (Vedic) fire-cult as yielding unstable results[33] and discourages people from practicing austerities and performing the Vedic sacrificial rites. Even as regards Rudra-worship[34] it does not entertain any high opinion, inasmuch as it says that people attain different regions (such as those of piśācas, Rākṣasas, etc.) by worshipping Rudra in different ways. For instance, a worshipper is said to be able to go to the Yakṣa-loka by worshipping Rudra thrice a day with the intention of taking wine and meat *(madyamāṁsāturāḥ)*, to the Gandharva-loka by worshipping him three or four times daily with song and dance, to the Indra-loka by worshipping him five times a day, to the Prājāpatya-loka by worshipping him six times daily with a passionate mind *(kāmāsakta citta)*, to the Soma-loka by worshipping him seven times a day, to the Brahma-loka by worshipping him eight times a day with the Gāyatrī, to the Viṣṇu-loka by worshipping him nine times a day, and even to the Rudra-loka (also called Śiva-pura), which is situated above Viṣṇu-pura and meant for those who are given to Karma-yoga, without making much effort. The *Śiva-dharmottara* further tells us that above Śiva-pura there are three excellent regions *(sthāna-trayaṁ param)* of Skanda, Uma and Śaṁkara,[35] the last occupying the highest position and being

---

32. See *ibid*, chap. 3 (fol. 50b)-
    एवं हि कष्टानि तपांसि यज्ञान् क्लेशात्मकानल्पफलप्रदांश्च।
    संत्यज्य सर्वान् शिवयोगमेकं ध्यायेत् परं मुक्तिकरं विशुद्धम्।
33. Cf. *ibid*, chap. 3 (fol. 51a)-
    तस्मात् स्वग्नीयमुत्सृज्य कर्मयोगमशाश्वतम्।
    ध्यायेन्नित्यं विशुद्धं च ज्ञानयोगमनुत्तमम्।।
34. See *ibid*, chap. 5 (fol. 54a-b).
35. These three deities have been described as follows :
    श्कन्दं शक्तिधरं शान्तं षड्मुखं शिखिवाहनम्।
    तप्तचामीकरप्रख्यं त्रिशिखं बालरूपिणम्।।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



the only place where rebirth is unknown.

Among other topics of interest the *Śiva-dharmottara* mentions the establishment of hospitals *(ārogya-śala)*[36] and poor-houses *(anātha-maṇḍapa)*[37] and the free distribution of medicine among the diseased *(ārtauṣadhi-dāna)*.[38] The hospitals are to be fully equipped *(sarvopakaranopetā)* and attended by great physicians *(mahāvaidya-samanvitā)*. In connection with the method of Śivaworship this work says[39] that in the Go-mātṛ-loka (the region of Cows, which is the same as Śiva-pura or Śiva-loka) there are five divine Cows named Mandā,[40] Subhadrā, Surabhi, Suśilā and Sumanas, who came out of the churned ocean and are the mothers of the whole world *(sarvalokasya mātarah)*. It is further said that from these five Cows, who came down to the earth from Śiva-pura descended all the cows on earth; from their dung originated all kinds of lotus-seeds as well as the Bilva tree, in which Śri (Lakṣmī) resides permanently; their urine was the source of origin of the fragrant gum resin; the seed of the world *(jagad-bīja)* came out of their milk; and nectar originated from ghee.

Besides the subjects mentioned above the *Śiva-dharmottara* deals with the following topics :

Method of Śiva worship[41] which includes the following

---

प्रभाभिर्भाषिततनुं सर्वलोकानुकम्पकम्।
ध्यायमानः प्रसन्नात्मा गुहस्थानमवाप्नुयात्।।
कन्यारूपामुमां शान्तां सूर्यकोटिसमप्रभाम्।
ध्यायमानः सदा भक्त्या देव्याः स्थानमवाप्नुयात्।।
शुद्धस्फटिकसंकाशं जटामुकुटधारिणम्।
त्र्यङ्गं चतुर्भुजं शान्तमक्षमालाधरं हरम्।।
वरदाभयहस्तं च त्रिशूलासक्तपाणिकम्। ध्यायमानः शिवं नित्यं शिवस्थानमवाप्नुयात्।।

*Śivadharmottara*, Chap. 5 (Fol. 54 b)

36. *Ibid*, chap. 2 (fol. 48a)-
37-38. *Ibid*, chap. 7 (fol. 58a)-
39. See *ibid*, Chap. 1 (fol. 42b) and Chap. 12 (fol. 84a)
40. In Chap. 1 the name 'Mandra' (for 'Nanda') occurs.
41. This method is called 'ṣaḍ-aṅga vidhi' (six-limbed procedure') For description of this method see *ibid.*, Chap. 1 (fols. 42b-43a) and Chap. 4 (fols. 51b-52a).

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



operations : bathing the deity with ghee, milk and curd, which, being derived from cows, are highly sanctifying; offer of Bilva-leaves, red and blue lotuses, etc., and then of various kinds of delicious food including meat and other things cooked with ghee,[42] burning of fragrant gum resin after worship; circumam bulation and salutation of the deity, and prayer to him for forgiveness. Praise of performing, seeing, hearing or encouraging Śiva-worship.

Praise of giving copies of Śaiva works to students and worthy Śaiva teachers.[43]

Method of worshipping a Śaiva scripture *(śiva-Jñāna-pustaka)* on the full-moon day of Vaiśākha or Āśāḍha. (On this occasion all the requisites for preparing a copy are to be worshipped, viz., leaves, thread, ink-pot, pen, stool called Śara-yantra, seat, unguents, bed, good food, the sum to be given as remuneration, and so on.[44]

Praise of presenting a piece of cloth for covering the manuscript as well as a canopy for use at the place where the manuscript is kept and worshipped.[45]

Praise of giving food, clothes, foot-wears, umbrellas, bed, bed-sheets, seats, collyrium, unguents, requisites for bath, feasts, medicine, etc. to those given to the acquisition of knowledge of Śiva *(śiva-jñānabhiyukta)*.[46]

Results of reading, hearing, etc. of a complete or half verse

---

42. For a list of these varieties of food to be offered to Śiva See Chap. 4, fols. 51b-52a. These varieties include the following also; boiled rice with ghee; the same with soup; the same with pungent condiments; Śaṣṭika rice; various kinds of Śāli rice (viz., Sugandha-śāli, Raktaśāli and Kalama-śāli); tasteful condiments; milk with rice; scented drinks; special varieties of fruits; delicious sweets prepared with ghee; various kinds of sweet and fragrant curd prepared with sugar; and so on.
43. *Śiva-dharmottar,* Chap. 2 (fols. 43a-45a).
44-46. *Ibid.* Chap. 2 (fol. 45b).

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



of a Śaiva scripture.[47]

Procedure of inaugurating a Śaiva monastery (*śivāśrama)* and of establishing an image of Śiva in it. (This procedure includes a number of functions, viz., Śivādhivāsa, silent recitation of five kinds of Śaiva hymns, Śivavijñāpana, etc.)[48]

Construction of small rooms in front of a Śiva-temple, each to accommodate one or two Śaivas; furnishing these rooms with coloured circles (called *Śiva-maṇḍalaka*) containing the figure of a lotus in the middle; and dedication of these rooms to Śiva.[49]

Praise of drawing Maṇḍalas for Śiva, the Śaiva scripture *(Vidyā)*, and the spiritual guide *(Guru)* and making a *Vidyā-maṇḍapa* (i.e., a shed for the scripture) in the lecture-hall *(vidyā-vyakhyānamaṇḍapa).*[50]

Praise of offer of food, cooked or not, to Śiva, Agni and Guru. All kinds of food are to be offered to Śiva first of all; next, Homa is to be performed by throwing a small part of these into the fire; and then a portion is to be offered to the spiritual guide. Observance of this procedure is said to destroy sins arising from cultivation, usury, trade, anger, untruth, and 'the five places of slaughter' *(pañcasūnā)*. Sins arising out of violation of this procedure.[51]

Superiority of Jñāna to vows, donation, austerities, sacrifices, etc.[52]

---

47. *Ibid.* Chap. 2 (fol. 46a).
48. *Ibid.* Chap. 2 (fol. 47a).
49. *Ibid.* Chap. 2 (fol. 47b-48a).

कृत्वा सुकुट्टिमं भूमिमीश्वरायतनाग्रतः।
तत्र मण्डलकं कुर्यात् सुवृत्तं गोमयाम्भसा।।
सूत्रेण समितं कृत्वा नानावर्णकशोभितम् ।
विचित्रकुसुमाकीर्णं मध्ये पङ्कजशोभितम्।।
प्रदीपाक्षतसंयुक्तमुदकं भ्राम्य पाणिना।
मूर्ध्ना प्रणम्य मेदिन्यां शिवाय विनिवेदयेत्।।

50. *Ibid.* Chap. 2 (fol. 48a).
51. *Ibid.* Chap. 4 (fol. 51b).
52. *Ibid.* Chap. 2 (fol. 49b).

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



Praise of meditating on Śiva.[53]

Praise of serving Śiva-Yogins with food, drink, shelter, bed, clothes, etc.[54] and of seeing them, speaking with them and honouring them with food in a Śrāddha ceremony,[55] Results of neglecting or denouncing Śiva-Yogins.[56]

The five qualifications of a donor, viz., courtesy, generosity, friendliness, compassion and impartiality. Names of places suitable for making gifts, viz., Vārāṇasi. Kuruksetra, Prayāga, Puṣkara, Gaṅga-tīra, Samudra-tīra, Naimiṣa, Amara-kaṇṭaka, Śrīparvata, Gokarṇa, Vedaparvata, etc. Suitable time for making gifts, viz., eclipses, winter and summer solstice, etc. Necessity of Śraddhā in making gifts. The five components of Śraddhā.[57]

Nature of Śiva-dharma (which is free from the intention of doing mischief and the feeling of hatred, requires no physical torture or acute effort, is pure, extremely subtle and beneficial to all beings, yields the best results, has many branches all rooted in Śiva and so on).[58]

Discourses on *Adharma* (sinful acts), which varies with the inclination of sinners. Classification of *Adharma* into gross *(sthūla),* subtle *(sūkṣma)*, super-subtle *(susūkṣma)* etc. Description of Sthūla Adharma, which relates to the mind, speech and body. Four kinds each of mental, verbal and physical Adharma. Various other sinful acts, viz., denouncement and hatred of Śiva and his worshippers; stealing of Śaiva scriptures or of articles offered to Śiva; giving up of Saiva customs; denouncement or neglect, in any way, of one's spiritual guide; committing of the heinous crimes called *Mahāpātaka;* committing of sins with respect to the

---

53. *Ibid.* Chap. 3 (fol. 50a and 51a).
54. *Ibid.* Chap. 3 (fol. 48b-49a).
55-56. *Ibid.* Chap. 4 (fol. 52a and 52b respectively).
57. *Ibid.* Chap. 4 (fol. 53b).
The components of श्रद्धा are as follows
भक्तिर्भावपरा प्रीतिः शिवधर्मैकतानता।
प्रतिपत्तिरिति ज्ञेयं श्रद्धापर्यायपञ्चकम्।।
58. *Ibid.* Chap. 5 (fol. 53b).

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



Brāhmaṇas (viz., divulging their serious faults, humiliating them by one's learning, refusing them after inviting to accept gifts, creating obstacles to them when they are hungry, dispossessing them of their property earned by fair means, and so on); giving up of Śiva-jñāna after studying it; forsaking of one's parents as well as of the sacrificial rites such as the Agnihotra, the five great sacrifices, and so on; killing of innocent animals living in forests; not giving a marriageable daughter in marriage; having sexual union with a son's wife, a friend's wife, a sister, a virgin girl, an Antyaja woman, and so on.[59]

Enumeration of the *Upapātakas*[60] committed by the following acts : refusing a person after promising to give him money; stealing an article belonging to a twice-born man; transgressing the boundary; allowing one's own self to be subject to extreme vanity or rage or to haughtiness, ungratefulness, miserliness, etc.; over-addiction to objects of senses; adultery; marrying before one's elder brother; doing mischief to a Śaiva monastery *(śivāśrama)* with respect to its trees, inmates, cattle, agricultural products (such as paddy), etc.; selling of one's wife or child; living on one's wife's property; living with a wife who is in the habit of drinking; administering poison, or applying a *Yantra* (Tantric diagram) for killing a person; performance of *Mūla-karmans* and *Abhicāra* with evil purposes;[61] teaching people or reading books for fees; breaking of embankments; manufacturing or selling bows, arrows, darts, missiles, etc.; practising cruelty to animals; showing neglect to guests; and so on.

Discourses on *Karma-vipāka*[62] (fruition of action), with the mention that the above-mentioned sins of four kinds lead people to the region of Yama, where Citragupta and five other officers

---

59. *Ibid.* Chap. 6 (fol. 55a-56a).
60. *Ibid.* Chap. 6 (fol. 56a-57a).
61. *Ibid.* Chap. 6 (fol. 56b).
    विषमारणयन्त्राणां प्रयोगो मूलकर्मणाम्।
    उच्चाटनाभिचारश्च गरविद्वेषणक्रिया।।
62. *Ibid.* Chap. 7 (fols. 58a-59a). Also Chaps. 8-9.

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



act as judges for the actions of all. Results of giving various things (including palanquins, horses, etc.), constructing a temple or an assylum *(pratiśraya),* making a garden, dedicating troughs for containing drinking water for animals, and so on.

Description of the city of the God of Death (Vaivasvatapura)[63] and of the way to it, a city, where people of objectionable conduct and miserly habit are taken after death and punished. Description of the affairs of Yama's house. Names and description of hells (Raurava, Mahāraurava, etc.) Praise of birth as a human being in Bhārata.

Accounts of rebirth *(saṁsāra),*[64] with a description of (i) the way in which creatures get different kinds of body according to their actions, (ii) the formation of the body in the mother's womb, (iii) the process of birth, and (iv) the sufferings undergone by creatures after death.

Five causes of death, viz., diseases, weapons, snakebite, poison and Abhicāra rites.

Denouncement of money. Need for performance of Dharma; and necessity of penance *(prāyaścitta)* for a better rebirth.[65]

Discourses on Jñāna-yoga[66] which reveals Śiva as the only reality and the course of which is to be determined by the Śaiva Āgamas and not mearly by one's a *priori* speculation.

**Practice of Yoga**[67]—Its four factors-the person meditating the act of meditation, the object of meditation, and the necessity of meditation. Qualifications for Yoga practice. Suitable places (which should be very secluded). Conduct of Yogins (who are to be moderate as regards their food, rest, sleep, etc.[68], and to look

---

63. *Ibid.* Chap. 7 (fols. 59a-64b).
64. *Ibid.* Chap. 8 (fols. 65b-70a).
65. *Ibid.* Chap. 9 (fols. 71a-72b).
66. *Ibid.* Chap. 10 (fols. 72b-74a).
67. *Ibid.* Chap. 10 (fol. 74a-78b).
68. युक्ताहारविहारात्मा युक्तचेष्टेन (? चेष्टश्च) कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधश्च सर्वायुक्तविवर्जितः।।

*Ibid.* Chap. 10 (fol. 74b).

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



upon Brahmā, Viṣṇu and other gods as well as upon the diseases, relations and kings as great impediments to Yoga-practices).[69] Consttution of the seats to be used by Yogins.[70] Sitting postures (*āsana,* viz., Padmaka, Svastika, etc., before practising which Śiva, Devī and Gaṇādhipa are to be saluted). Mode of sitting.[71] Method of meditation, which consists of (i) *Tri-maṇḍala-dhyāna* which helps one get over the three Guṇas-Sattva, Rajas and Tamas, (ii) meditation on the twenty-fifth Tattva, viz., the Puruṣa who is beyond the Guṇas, and (iii) meditation on Śiva (having a figure as small as one's thumb) in the pericarp of a lotus *(padma)*, which is twelve Aṅgulas in diameter, has eight petals, rises from the navel, and remains above the Puruṣa. Different ways of meditating on Śiva in the pericarp, viz, Śiva as Oṁkāra may be conceived of as consisting of three Mātrās अ, उ and म् represented by Skanda, Devī and Maheśvara, or by Brahmā, Viṣṇu and Maheśvara, or by Vyakta, Avyakta and Puruṣa, Śiva himself being represented by half a Mātrā or kṣityāditattva-dhyāna; and so on. Description of Yoga of six functions *(ṣaḍaṅga yoga)*, viz., Prāṇāyāma, Pratyāhāra, Dhāraṇā, Dhyāna, Japa, and Samādhi. Method of performing *Recaka* (exhaling), *Pūraka*, (inhaling) and

---

69. *Ibid.* Chap. 2 (fols. 48a).

ब्रह्मविष्णुसुराः सर्वे व्याधयः स्वजना नृपाः।
योगस्यैते महाविघ्ना व्याधयस्तेन योगिनाम्।।

70. आसनं तूलसम्पूर्णं सितवस्त्रावगुण्ठनम्।
कृष्णाजिनोत्तरीयं च विन्यसेत् मृदुचर्मणि।।

*Ibid.* Chap. 10 (fol. 74b).

71. *Ibid.* Chap. 10 (fols. 74b).

ऋजुग्रीवः शिरोवक्षा (? ग्रीवशिरोवक्षा)
नातिश्लिष्टोष्ठलोचनः।
किंचिदुन्नामितशिरा दन्तैर्दन्तान् न च स्पृशेत्।।
दन्ताग्रसन्निघौ जिह्वामचलां सन्निवेश्य च।
पार्ष्णिभ्यां वृषणौ रक्ष्यौ तथा प्रजननं पुनः।।
ऊर्ध्वोपरि (च) संस्थाप्य बाहू तिर्यक् प्रयत्नतः।
दक्षिणं करपृष्ठं तु न्यसेद् वामतलोपरि।।
उन्नाम्य शनकैः पृष्ठमुरो विष्टभ्य चाग्रतः।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं तु दिशश्चानवलोकयन्।।
संहतः (? संहत-)प्राणसंचारः पाषाण इव निश्चलः।
मैत्र्यादिवासनायुक्तः परं वैराग्यमाश्रितः।।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



*Kumbhaka* (retention of breath). Various disturbances *(upadrava)*. Diseases and their treatment. Performance of Prāṇāyāma with or without *Japa* (mental repetition of the Mantra). Praise of Prāṇāyāma practised with *japa*. Praise fo Japa (which removes many difficulties). Idleness and other obstacles to Yoga-practice. Divine indications *(upasarga)*, such as *Pratibhā*, etc.,[72] foretokening success. Characteristics of a *Siddha* (successful) Yogin (viz., revelation of the knowledge of the Vedas and other scriptures as well as of the divine medicines, fragrance of the body, and so on).

Conduct of the Śiva-worshippers.[73] –Their morning duties; mode of purification of the body; cleansing of clothes of different stuff with different articles, cleansing and purification of utensils and other articles; bath after cleansing the body with earth and cow-dung and sanctifying the water by citing the Śiva-mantra twenty-one times; muttering of the Śiva-mantra as a means of purification in case of various kinds of sins including murder of men, women and children of different castes (among whom the *Sat-śūdras* and the ordinary Śūdras have been mentioned); restrictions about taking food, etc. in case of impurity due to birth and death. Method of bathing Śiva after performing the penance called *Brahma-Kūrca*[74] every four months, and of drinking this water for self-purification.

Statements (made in connection with the world of cows—*Go-loka* or *Go-mātṛ-loka*) about the position, extents, distance, etc. of the hells and the seven lower worlds *(pātāla)*.[75]

Terrestrial geography.[76] –Names and position of the seven continents *(Dvīpas)*, of which Jambu-dvīpa is said to be in the

---

72. *Ibid.* Chap. 10 (fols. 78a).
73. *Ibid.* Chap. 11 (fols. 78b-80b).
74. This penance is as follows :

    अहोरात्रोषितो भूत्वा पौर्णमास्यां विशेषतः।
    पञ्चगव्यं पिबेत् प्रातर्ब्रह्मकूर्चमिति स्मृतम्।

75. *Śiva-dharmottara*, Chap. 12 (fols. 80b-81a).
76. *Ibid*, Chap. 12 (fols. 81a-b).

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



middle of the earth (mahī-madhye).[77] Names of the seven oceans, viz., those of salt, sugarcane juice, wine, etc. Names and position of the nine principal mountains of Jambu-dvīpa (viz., Himavat, Hemakūṭa, etc.). Names of mountains of other Dvipas, of which Puṣkara-Dvīpa is said to have a circular mountain named Mānasottara.[78]

Celestial geography.[79] – Position and description of the upper worlds *(loka)*, viz., Bhūr-loka, Bhuvar-loka, etc. The seven Winds, viz., Āvaha, Pravaha, Udvaha, Saṁvaha, Vivaha, Parāvaha and Parivaha, and the places occupied by these. Position and description of Brahma-Loka, Viṣṇu-loka, Skanda-loka, Umā-loka and Śiva-loka, the last one occupying the highest place. Detailed description of Śiva-loka (which is the same as Go-loka—the world of cows) and of the Gaṇas there.

Glorification of cows.[80] – Praise of rendering respectful service to cows and of making gifts of these animals to Śiva or to one's spiritual guide.

Detailed instructions on the rearing of cattle. Worship of Rudra, Brahmā, Viṣṇu, Durgā, Nandā and other Mātṛs (mother goddesses) in a cowshed. Nature of grazing grounds in different seasons. Restrictions about milking of cows (which are not to be milked during the first two months of their delivery, and from which only half the quantity of milk is to be had during the third month). Prohibitions about using cows and bulls for riding.

Gift of various things (including articles of food) to Śiva

---

77. *Ibid,* Chap. 12 (fols. 81b).
जम्बुद्वीपो महीमध्ये प्लक्षद्वीपस्ततः परः।
तृतीयः शाल्मलीद्वीपः कुशद्वीपश्च तद्बहिः।।
क्रौञ्चद्वीपश्च परतः शाकद्वीपश्च तद्बहिः।
परतः पुष्करद्वीपः सप्तमः परिकीर्तितः।।

78. *Ibid,* Chap. 12 (fols. 81b).
पुष्करद्वीपमध्ये च पर्वतो बलयाकृतिः
एकः स्थितः समन्ताच्च नामतो मानसोत्तरः।।

79. *Ibid,* Chap. 12 (fols. 82a-83a and 87a).

80. *Ibid,* Chap. 12 (fols. 83-87a).

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



and to a 'Pāśupata'.[81]

Praise of study and practice of the Śiva-dharma.[82]

Method and praise of worshipping the Śiva-dharmaśāstra by placing it on a Siṁhāsana (throne) or a Daṇḍāsana[83] and of having it read out by a reader.[84]

The above summary of contents of the *Śiva-dharmottara* shows that it is an interesting work containing varied information about the contemporary state of religion and society. It belongs to those Pāśupatas who looked upon Lakulīśa as a great teacher *(guru)* identical with Śiva himself, worshipped Śiva in a Liṅga or image or in fire, and held that the best adept in religious lore was one who knew the import of the 'Śiva-tantras'.[85] These sectaries respected the Veda and looked upon it as one of the sources of their sectarian Mantra of six syllables (the other source being the Śivāgama),[86] but they deprecated the performance of Vedic sacrifices as causing great waste of time, money and energy and yielding negligible result.[87] On the other hand, they regarded the Śaiva Āgamas as the highest authority in religious matters[88] and advocated the superiority of these works over the Vedas saying that 'both the Vedas and the Śivāgamas being Āgamas, one should not have any dislike for the latter in which an easy way of attaining final release in a single life has been indicated.'[89] Ac-

---

81. *Ibid,* Chap. 12 (fols. 86).
82. *Ibid,* Chap. 12 (fol. 87b).
83-84. *Ibid,* Chap. 12 (fol. 88b).
85. *Ibid,* Chap. 2 (fol. 43b).
*Śiva-tantrārthavid dhīmān sa vidyā-parameśvaraḥ.*
86. For the relevant verse see foot-notes 8 above.
87. For the relevant verse see foot-notes 12 and 33 above.
88. Cf. *Śivadharmottara,* Chap. 10 (fol. 72 b).
स्वसिद्धान्ताविरोधेन यस्तर्केण विचारयेत्।
धर्मज्ञानापवर्गार्थं स तत्त्वान्वेषणे रतः।।
* * * *
तस्मादागमयुक्त्यैव सूक्ष्मार्थप्रविचारणम्।
कर्तव्यं नानुमाने न केवलेन विपश्चिता।।
89. *Ibid.* Chap. 10 (fol. 73b).

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta



cording to them, 'Śiva is known to the Śivāgamas as having no beginning, middle or end and being naturally pure, mighty, omniscient and complete'[90], and 'in spite of the multiplicity of scriptures the (book of) knowledge accomplished by the omniscient Śiva is the (only) authority'[91]. In their opinion, Rudra is the twenty-sixth Tattva, and Śiva, who is tranquil and extremely subtle and is the Parameśvara (supreme lord), is the twenty-seventh one[92]. They further say that from Purusa, who is the twenty-fifth Tattva, originate Rudra (i.e., the lower and secondary one), Viṣṇu and Pitamaha, and from *Pradhāna* comes *Buddhi,* from which, again, come *Ahaṁkāra* and the other *Tattvas* in succession.

Though decrying the Vedic sacrificial rites and professing to follow the Śaiva Āgamas, the *Śiva-dharmottara* seems to uphold the rigours of caste-system by distinguishing between satśūdras and ordinary Śūdras and by declaring as heinous crimes *(mahāpātaka)* all acts that may affect a Brāhmaṇa physically, mentally or economically. Like the other Purāṇic works it takes a pessimistic view of life and cites a good number of instances[93] to

---

आगमत्वेऽपि सामान्ये कः प्रद्वेषः शिवागमे।
अनायासेन यत्रोक्ता मुक्तिरेकेन जन्मना।।

90. *Ibid.* Chap. 10 (fol. 73a).
आदिमध्यान्तनिर्मुक्तः स्वभावविमलः प्रभुः।
सर्वज्ञः परिपूर्णश्च शिवो ज्ञेयः शिवागमे।।

91. *Ibid.* Chap. 10 (fol. 73a).
बहुत्वेऽपि च शास्त्राणां सर्वज्ञेन शिवेन यत्।
प्रणीतममलं ज्ञानं तत् प्रमाणं न संशयः।।

92. *Ibid.* Chap. 10 (fol. 74a).
रुद्रः षड्विंशकः प्रोक्तः शिवश्च परमं ततः।
सप्तविंशतिमः शान्तः सूक्ष्मुम्मः परमेश्वरः।।

93. Viz., those of Yajña, whose head was severed and later joined to the trunk by Aśvins and who, consequently, had a permanent disease of the head *(śiroroga);* Mārtaṇḍa Bhānu, who had an attack of leprosy; Varuṇa, who suffered from dropsy *(jalodara);* Pūṣan, who had mutilation of tooth *(daśana-vaikalya);* Śacī's husband (Indra), who had his hand benumbed; Soma, who was attacked with a dangerous type of consumption; Dakṣa, who had a severe attack of fever; and so on.

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



show that even gods cannot escape the sufferings consequent upon physical existence.

A perusal of the the *Śiva-dharmottara* shows that it was composed much later than the *Śiva-dharma*. Unlike the latter, it recognises the authority of the Śivāgamas[94] and the Śiva tantras,[95] mention the use of Tantric Yantra for evil purposes,[96] and refers, in connection with the mention of the distances between the different Pātālas, to 'people most conversant with the meanings of Tantras' *(tantrārtha-vittama)*.[97] By its inclusion of meat among the articles of food to be offered to Śiva and by its mention that people used to worship Rudra for the sake of wine and meat, the *Śiva-dharmottara* seems to betray its knowledge of the wide spread of Tantricism among the people. In Chap. 2 (fol. 44a) there is a direction for the use of the Nandi-nāgara script in copying manuscripts, and, according to Dr. Bühler, this script originated from the Southern Nagarī of the 8th-11th centuries A.D.[98] So, the *Śiva-dharmottara* cannot possibly be dated earlier than 700 A. D. On the other hand, there are evidences to show that this work was written earlier than 800 A. D. It has already been mentioned that of the two old Newari Mss. In the library of the Asiatic Society, Calcutta, which include the texts of both the *Śivadharma* and the *Śiva-dharmottara* one was dated by Mm. Haraprasad Shastri in the twelfth century A. D. on palaeographical grounds and the other has in the post-colophon statement of its eighth work the mention of the Newari year 156 (=1036 A. D.). So, the *Śiva-dharmottara* must have been written not later than 1000 A. D. Again, a good number of verses have been quoted from the '*Śiva-dharmottara*' in Raghunandana's *Smṛti-tattva,* Rudradhara's *Varṣa-kṛiya,* Mādhavācārya's commentary,

---

94. See *Śiva-dharmotara* Chaps. 1 (fol. 41b), 5 (fol. 53b), and 10 (fols, 72 b, 73a, 73b).
95. *Ibid.* Chap. 2 (fol. 43b).
96. *Ibid.* Chap. 6 (fol. 56b). For the text of the verse see foot note 61 above.
97. *Ibid.* Chap. 12 (fol. 81a).
98. G. Bühler, *Indian Palaeography,* p. 51.

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS



on the *Parāśara-smṛti,* Hemādri's *Caturvarga-cintāmaṇi,* and Aparārka's commentary on the *Yājñavalkya smrti,* and also in the *Śvetāśvatara-upaniṣad-bhāṣya* ascribed to Śaṅkara[99] (see Appendices I and II); *Devi-purāṇa*, Chap. 91, which was interpolated not later than 1050 A. D.,[100] has the line 'nandi-nāgarakair varnair lekhayec chiva-pustakam' in common with *Śiva-dharmottara,* Chap. 2 and seems to have known and utilized the section on Vidyā-dāna of the latter work; the *Ekāmra-purāṇa,* which was written in the tenth or eleventh century A.D.[101] mentions 'Śiva-yoga' as having been described in the *Śiva-dharmottara*[102] and thus knows the present *Śiva-dharmottara*, which deals with, 'Śiva-yoga' in Chap. 10; and the Vāyavīya-saṁhitā (of the *Śiva-purāṇa*), which was written between 800 and 1000 A.D.,[103] knows the *Śiva-dharmottara*, which it mentions as the "Uttara" (latter part) of the "*Śiva-dharmākhya Śāstra*".[104] So, the *Śiva-dharmottara* must be dated not later than 800 A.D.

Thus, the date of composition of the *Śiva-dharmottara* (in its present form) falls between 700 and 800 A.D.

Like the *Śiva-dharma,* the *Śiva-dharmottara* also seems to have been written in Northern India. Most, if not all, of the holy

---

99. That this Bhasya is a post-Śaṅkara work can be little doubted. S. K. Belvalkar, Vidhuśekhara Śāstri, and others do not recognize it as a work of the great teacher Śaṅkarācārya.
100. For my article on the *Devī-purāṇa* See *New Indian Antiquary,* V, pp. 2-20.
101. For this date of the *Ekāmra-purāṇa* see my article in *Poona Orientalist,* XVI, 1951, pp. 70-76.
102. See *Ekāmra-purāṇa* (Dacca University Ms. No. 4492), fol. 86a-b.
    शिवयोगं समासाद्य शिवधर्मोत्तरोदितम्।
    अक्षये शिवलोके च शिवेन सह मोदते।।
103. For the date of the Vāyavīya-saṁhitā see my article on "The Problems relating to the *Śiva-purāṇa*" published in *Our Heritage* (a half-yearly Bulletin of the Research Department of the Sanskrit College, Calcutta), Vol. I., 1953, pp. 46ff.
104. See *Śiva-purāṇa* (Vaṅgavāsi ed.), V (Vāyavīya-saṁhitā). 24. 17a-*Sāstram ca śiva-dharmākhyaṁ dharmakhyam ca tad-uttaram.*

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



places, said to be resorted to by gods and Siddhas,[105] belong to this part of the country. It is probable that the work was written at Banaras, the name of which heads the list of holy places given in Chap. 4 (fol. 53 b). In spite of its probable origin in Northern India, this work attained popularity in South India also, where Mss. Of this work have been found in Devanāgarī, Āndhra and Malāyalam scripts.

It has already been said that the *Śiva-dharmottara* has been drawn upon in some of the Smṛti Nibandhas. But unfortunately, most of the verses quoted therein are not found in the present text of this work.[106] This remarkable fact may be explained by saying that the text of the *Śiva-dharmottara*, known to these writers, was more extensive than what has come down to us. As a matter of fact the *Śiva-dharmottara* itself records a tradition that it is the abridged form of a much bigger work dealing with Karma-yoga, Jñāna-yoga and the nature of Dharma and Adharma. So, the original *Śiva-dharmottara* must have been composed much earlier than the eighth century A. D.

---

105. These are Varāṇasi, Kurukṣetra, Prayāga, Puṣkara, Gaṅgā, Samudra-tīra, Naimiṣa, Amarakaṇṭaka, Srīparvata, Gokarṇa and Vedaparvata –*Śiva-dharmottara,* Chap. 4 (fol. 53b).

106. For an idea of these untraceable vesses see Appendise II.
One of these verses (quoted in Mādhavācārya's commentary on *Parāśara Smṛti* II. ii. p. 339) is as follows :

वेश्यां कुलवधूं कृत्वा वर्तते यो नराधमः।
भक्तं भोक्तुमशक्तश्च मण्डपानेन जीवति।।



Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



# APPENDIX-I

The verses, ascribed to the '*Śiva-dharmottara*' in

| | |
|---|---|
| 1. Apararka's commentary (on the *Yājñavalkya-smṛti*), | Occur in *Śiva-dharmottara,* |
| p. 274 (the first quotation of 2 lines) | Chap. 11 (fol. 80a) |
| 2. Hemādri's *Caturvarga-cintāmaṇi,* III | |
| p. 353 (2 lines wrongly ascribed to the *'Śiva-dharma'*) | Chap. 2 (fol. 43 a) |
| p. 430 (2 lines) | Chap. 4 (fol. 52a) |
| p. 434-5 (2 lines) | Chap. 4 (fol. 52a) |
| p. 1628-29 (17 lines) | Chap. 12 (fol. 85a-b) |
| p. 1633 (4 lines) | Chap. 12 (fol. 85b) |
| p. 1634 (7 lines) | Chap. 12 (fol. 85b) |
| 3. Mādhavācārya's commentary (on the *Parāśara-smṛti*) | |
| II. ii, p. 208 (2 lines) | Chap. 6 (fol. 55a) |
| 4. Raghunandana's *Smṛti-tattva,* | Chap. 2 (fol. 43a) |
| I. P. 657 (2 lines, wrongly ascribed to the *Śiva-dharma*) | |
| 5. *Śvetāśvatara-upaniṣad-bhāṣya* ascribed to Śaṅkara (Ānandāśrama press ed.), | |
| p. 7 (4 lines) | Chap. 3 (fol. 49b, lines 3-4) |
| p. 8 (10 lines) | Chap. 3 (fol. 49b, line 6 to fol. 50a, line 2) |
| p. 33 (2 lines) | Chap. 3 (fol. 50a, line 3-v. 1. ज्ञानात् for ध्यानात्) |

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



| | |
|---|---|
| p. 34 (2 lines) | Chap. 3 (fol. 49b, line-4) |
| p. 35 (9 lines) | Chap. 3 (fol. 50b, line 2) |

While examining the *Śiva-dharma* we have already said that in *Caturvarga-cintāmaṇi* I, p. 467 and II. ii, pp. 396 and 887-9, 6, 11 and 37 metrical lines respectively of *Śiva-dharma,* Chaps. 10 and 9 have been wrongly ascribed to the *Śiva-dharmottara.* 27

*****

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



# APPENDIX II

The verses, ascribed to the *'Śiva-dharmottara'* in the following works, are not found in the present *Śiva-dharmottara* :-

(1) Aparārka's commentary on the Yajñavalkya-smṛti, pp. 274-5 (five quotations of 3, 1, 4, 12 and 9 lines respectively on impurity and purification).

(2) Hemadri's *Caturvarga-cintāmaṇi* III. i, p. 354 (4 lines on the characteristics of an 'Ātmajña' and the Śiva-yogins).

(3) Madhavācārya's commentary on the *Parāśara-smṛti,* II. ii., pp. 227 (4 lines on Karma-vipāka), 236 (11 lines on the same topic), 339-40 (21 lines on the same topic), 243-4 (13 lines on the same topic), and 250 (2 lines on the same topic).

(4) Rudradhara's *Varṣa-kṛtya,* pp. 102-111 (about 200 lines on Śivarātri-vrata-vidhi).

(5) Raghunandana's *Smṛti-tattva*, I, p. 417 (2 lines on Śivaworship).

*****

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



# विषयानुक्रमणिका

**गोषडङ्गविधिर्नाम प्रथमोऽध्यायः** ..... 1

मङ्गलाचरण ..... 1

श्रीअगस्त्योवाच ..... 1

पञ्चमहायज्ञनामानि ..... 2

श्रीस्कन्दोवाच ..... 3

श्रद्धामाहात्म्य ..... 3

शिवमन्त्रमाहात्म्य ..... 4

गुणानुसारद्रव्यफलम् ..... 8

शासकप्रतिकर्तव्यकथनम् ..... 9

सुभाषितमहिमा ..... 11

गोषडङ्गविधिवर्णनम् ..... 14

**विद्यादानफलं नाम द्वितीयोऽध्यायः** ..... 18

विद्यादातारप्रशंसाह, स्कन्दोवाच ..... 18

विद्यादानमाह ..... 18

गुरुलक्षणम् ..... 18

पुस्तकाश्रित विद्यादानाह ..... 20

विद्यासिंहासनलक्षणम् ..... 22

दण्डलक्षणम् ..... 22

लिप्यार्थ पुस्तकन्यासविधानम् ..... 22

गुरुव्रतिनद्विजार्थ भोजनकर्त्तव्याह ..... 24

विद्यामण्डलकं विधानम् ..... 24

लेखनार्थाक्षरविधानम् ..... 25

पुस्तकलेखनान्तरकर्त्तव्यम् ..... 25

शिवविद्याविमानवर्णनम् ..... 26

अकालकौमुदीदेवसत्रञ्च वर्णनम् ..... 27

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IGNOU



पुस्तकवाचकगुणाह ..... 29
आचार्यादीनां भोजनम्..... 29
महाशान्तिकृत्यं फलमाह ..... 30
पु स्तकदानफलमाह ..... 30
पुस्तकपूजनफलमाह ..... 32
नवलेख्यपुस्तकनिवेदनफलमाह ..... 32
लेखनोपस्कारादीनां दानफलमाह ..... 32
पुस्तकास्तरणादीनां दानफलमाह ..... 33
छाद्यदानफलमाह ..... 33
उपानादीनां दानफलमाह ..... 34
वाचनपूर्वे विद्यामण्डलकं विधानमाह ..... 34
वाचनविधानमाह ..... 35
पठनपाठनफलमाह ..... 35
श्रीपर्णपुटकं फलकश्च दानफलमाह ..... 36
सपिधानमञ्जूषाविद्याकोशं वर्णनम्..... 36
मठान्तर्गतविद्यादानगृहविधानम्..... 37
विद्यारत्नकरण्डकमाह ..... 37
पुष्पगृहान्वितविद्यासिंहासनपूजनम्..... 37
विद्यायतनविधानम् ..... 38
महारम्यवेदीनिर्माणविधानम्..... 40
शिवाश्रमारामशोभार्थे वृक्षादीनां परिकल्पनाह ..... 41
स्नानादीनां विधानमाह ..... 43
एवं विधं शिवपुरनिर्माणफलमाह ..... 44
शिवाश्रमनिर्माणफलमाह ..... 46
विद्याव्याख्यानमण्डपं फलमाह ..... 47
अथारोग्यशालास्थापनफलमाह ..... 47
**पञ्चमहायज्ञगुणाऽध्याय नामकं तृतीयोऽध्यायः ..... 50**
स्कन्दोवाच ..... 50
कर्मध्यानज्ञानश्च त्रिविधयज्ञवर्णनम्..... 52
ज्ञानयज्ञमाहात्म्यम्..... 52

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



ज्ञानीनां स्थितिवर्णनम् ..... 57
ज्ञानध्यानश्च वर्णनम् ..... 58
**सत्पात्रगुणं नाम चतुर्थोऽध्यायः ..... 65**
स्कन्दोवाच ..... 65
शिवयोगिनां दानफलम् ..... 66
नैवेद्यस्वरूपानुसारेणफलवर्णनम् ..... 68
शिवयोगिनार्थ श्राद्धकर्म फलम् ..... 70
शिवयोगीदर्शनं फलम ..... 70
श्राद्धकाले शिवयोगीप्रतिभोजनफलम् ..... 71
अथातिथिप्रशंसाह ..... 71
विषमपात्रलक्षणम् ..... 74
दाताग्रहिताश्च व्यवहारमाह ..... 76
दानपात्रविचारमाह ..... 77
दानोपयोगी स्मरणीयस्थानमाह ..... 78
तत्र दानकालादीनां ..... 79
**शिवसङ्गत्य पञ्चमोऽध्यायः ..... 80**
स्कन्दोवाच ..... 80
दशविधधर्मलक्षणमाह ..... 81
नानाक्रमेण रुद्रार्चनफलमाह ..... 82
विष्णुपुरादूर्ध्वं शिवपुरवर्णनम् ..... 84
स्कन्दस्वरूपवर्णनम् ..... 85
उमास्वरूपवर्णनम् ..... 85
शिवस्वरूपवर्णनम् ..... 85
ज्ञानयोगसिद्धस्थितिमाह ..... 86
इत्यमनन्तर योगवर्णनम् ..... 86
शिवपुरस्यैश्वर्यमाह ..... 87
**पापभेदं नाम षष्ठोऽध्यायः ..... 88**
मानसिकवाचिककायिककर्मञ्च ..... 89
षट्महापापानि ..... 90

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and MoE



गुरुनिन्दासमं पापमाह ..... 92
ब्रह्महासंज्ञकमहादोषमाह ..... 92
उपपातकलक्षणम् ..... 95
मायावीचपलशठस्य लक्षणम् ..... 98
वृथपाकलक्षणम् ..... 99
गोघातकलक्षणम् ..... 100
तथान्यनारकीनाह ..... 100
प्रायश्चितविधानम् ..... 103
**नरक विशेष नाम सप्तमोऽध्यायः ..... 104**
चतुर्विधयमलोकवर्णनम्। स्कन्दोवाच ..... 104
विविधदानादीनां फलमाह ..... 105
अन्नदानमहिमा ..... 107
जलदानमाहात्म्याह ..... 109
यमपुरी वर्णनम् ..... 110
यमराजस्वरूपवर्णनम् ..... 116
चित्रगुप्त उवाच ..... 118
स्कन्दोवाच ..... 119
चित्रगुप्तवचनं ..... 119
स्कन्दोवाच ..... 120
यमराज उवाच ..... 120
स्कन्दोवाच ..... 120
नरकार्णववर्णनम् ..... 121
रौरवादि नरकनामानि ..... 122
तथान्यनरकं नामरूपाणि ..... 122
नरकगतिवर्णनम् ..... 125
शिवालयभञ्जकस्य दण्डमाह ..... 132
गुरोर्निन्दाश्रवणफलम् ..... 133
परस्त्रिस्पर्शादि फलम् ..... 133
नेवैद्योलङ्घनफलमाह ..... 134
लोभवशात्शिवारापुष्पाणिसङ्ग्रह्यफलम् ..... 134

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



महात्मादीनां निन्दाफलम् ..... 135
परद्रव्यग्रहणदीनां फलम् ..... 135
शिवालयसीमायां पुरीषमूत्रविसर्जनफलम् ..... 136
दुःखप्रवर्तक मनः ..... 137
अतिथ्यापमानफलम् ..... 137
बहुविधनरकदण्डवर्णनम् ..... 137
महापातकिनादीनां नरकवासवर्णनम् ..... 140
तथा च योन्यानुरूपजन्मचक्रम् ..... 141
मनुष्यजन्मप्रशंसाह ..... 142
मानुष्यत्वं कर्तव्यमाह ..... 143
**संसार प्रसवाख्यानं नामाष्टमोऽध्यायः ..... 145**
स्कन्दोवाच ..... 145
कर्मानुसारेण चतुर्विधजीवयोनयाप्तिं ..... 145
जीवजन्मविधानम् ..... 147
द्वादशमलानि ..... 148
रसात् द्वादशपरिणामः ..... 148
शुक्राद्दिव्यशरीरस्य सम्भवामि ..... 149
इत्यमनन्तर व्याधिवर्णनम् ..... 165
आहारोत्पन्नपीडायाम् ..... 170
धनीनां पीडायाम् ..... 171
कालजन्यपीडायाम् ..... 172
कुटुम्बिनां चिन्तायामाह ..... 172
नराधिपस्य पीडावर्णनम् ..... 173
प्रसङ्गानुसारेण दृष्टान्तमाह ..... 173
कालमहिमावर्णनम् ..... 174
व्यर्थ राज्ञोभिमानमूलक दृष्टान्तम् ..... 176
स्वर्गिक सुखस्थितिमाह ..... 177
स्वकर्मप्रशंसामाह ..... 177
देवगणदुःखानि ..... 178
चतुर्विधपातकमाह ..... 178

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



स्थावरादीनां दुःखमाह ..... 178
मनुष्यजन्मस्य दुःखादीनां ..... 179
तदर्थे शुभोपायमाह ..... 181
स्वात्मदोषवर्जननिर्देशमाह ..... 182
**स्वर्गनरकचिह्नो नाम नवमोऽध्यायः ..... 184**
स्कन्दोवाच ..... 184
**ज्ञानयोगो नाम दशमोऽध्यायः ..... 191**
संसारचक्रात् मुक्त्योपायज्ञानयोगवर्णन। स्कन्दोवाच ..... 191
शिवशास्त्रप्रशंसाह ..... 192
शिवज्ञानप्रशंसाह ..... 193
ध्याताध्यानध्येयप्रयोजनम् ..... 198
अन्यदप्याह ..... 199
साधनायोग्यस्थलवर्णनम् ..... 200
ध्यानयज्ञफलम् ..... 202
गुणत्रयचिन्तननिर्देशाह ..... 203
त्रयमण्डलपूर्वकं ध्यानम् ..... 203
शिवस्य दशमूर्तिध्यानम् ..... 207
शिवध्यानम् ..... 208
षड्विधयोगवर्णनम् ..... 209
प्राणायामजन्यव्याधीनामाह ..... 211
व्याधिशमनार्थोपायमाह ..... 211
द्वौविधः प्राणायामाह ..... 213
प्राणायाममाहात्म्यम् ..... 215
प्रत्याहार वर्णनम् ..... 215
धारणा वर्णनम् ..... 216
ध्यान वर्णनम् ..... 217
जपयज्ञस्य माहात्म्याह ..... 217
योगमार्गगतविघ्नाह ..... 221
सिद्धिसूचकलक्षणाह ..... 221

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



**प्रायश्चित कथनं नामैकादशोऽध्यायः ..... 224**

स्कन्दोवाच ..... 224

उत्थापनमूत्रोत्सर्ग च विधिः ..... 224

शौचाचारनियमाः ..... 225

वस्त्रशौचमाह ..... 227

इदानीं स्थानशुद्धिमाह ..... 228

कार्दमादीनां शुद्धिमाह ..... 228

शाकादीनां शुद्धिमाह ..... 230

जलशुद्धिमाह ..... 231

पञ्चविध शुद्धिमाह ..... 232

द्रव्यशुद्धिमाह ..... 233

शिरस्नानविधिं ..... 233

उपवीताचरणम् ..... 234

संध्याभ्रष्टदोषनिवारणार्थ प्रायश्चितमाह ..... 234

अनिवेद्यभोजप्रायश्चितमाह ..... 235

प्राणिहत्याप्रायश्चितमाहं ..... 235

मृतकसूतकाह ..... 236

न स्पृशेत्पाण्यान्न भक्षयेत् ..... 236

ब्रह्मकूर्चफलमाह ..... 237

**पातालादि शिवलोकपर्यन्तानां लोकानां निरूपणं द्वादशोऽध्यायः ..... 239**

अगस्त्योवाच ..... 239

स्कन्दोवाच ..... 239

सप्तद्वीपापृथ्वीवर्णनम् ..... 242

शिवपुरवर्णनम् ..... 247

तत्रैव नानाप्राणिस्वरूपमाह ..... 249

तत्र भूमिवर्णनमाह ..... 250

तत्राङ्गनारूपवर्णनम् ..... 251

गोसुभाषितम् ..... 255

गोशालानिर्माणं सफलमाह ..... 256

गोशालाप्रबन्धमाह ..... 257

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



तत्र पूजाकार्यमाह ..... 257
गोप्रवेशकार्यमाह ..... 258
गोशालानिर्माणफलम् ..... 258
गोशालाशोधनफलमाह ..... 260
गोचारणविधिमाह ..... 260
गोवत्सप्रतिकर्त्तव्यमाह ..... 261
आहारगृहनिर्माणोद्धारफलमाह ..... 263
गोदानप्रसङ्गेन वृषभदानमप्यभिधीयते ..... 263
गोकुलेगोदानफलमाह ..... 266
गोप्रशंसामाह ..... 266
वृषविषयकपातकानि ..... 266
वृषभैकादशीदानफलमाह ..... 268
गोपालनफलमाह ..... 268
शिवाश्रमयात्रामाहात्म्यमाह ..... 269
दानकालवचनमाह ..... 269
शिवज्ञानीप्रतिवस्त्रकृष्णाजिनादीनां दानमाह ..... 270
सव्यञ्जनभिक्षादीनां दानफलमाह ..... 270
शिवभक्तप्रतिजलदानफलमाह ..... 271
कर्करीयुक्तकलशदानपुण्यमाह ..... 271
नानापात्रदानफलमाह ..... 271
शूलधारकप्रतिनमस्कारफलमाह ..... 272
शिवब्रह्मचारिणां भोजनफलमाह ..... 272
बलीवर्द्दहननप्रायश्चित्तमाह ..... 277
पोगण्डकहननप्रायश्चितमाह ..... 277
भर्त्तृघ्नी प्रतिग्रहप्रायश्चित ..... 277
उभयमुखीप्रदक्षिणाफलमाह ..... 278
दधिधेनुप्रतिग्रहमाह ..... 278
अथान्ते ग्रन्थमाहात्म्यमाह ..... 278

*****

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE

# श्रीमद्शिवधर्मोत्तरपुराणम्

## ( मोहनबोधिनीटीकोपेतम् )

## अथ गोषडङ्गविधिर्नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ 1 ॥

*अथ मङ्गलाचरण —*

**शिवमस्तु सर्वजगतां परहित निरता भवन्तु भूतगणाः।**
**दोषाः प्रयान्तु शान्ति सर्वत्र सुखी भवन्तु सकललोकाः ॥ 1 ॥**

भगवान् शिव समस्त जगत के परहित में निरत रहते हैं। उनसे समस्त भूतगण प्राणियों के दोषों का निवारण होता है। सकल लोकों में शान्ति होती है तथा सभी प्राणी सुखी होते हैं। (उन प्रभु को प्रणाम)।

**ज्ञानशक्तिधरं शान्तं कुमारं शङ्करात्मजम्।**
**देवारिसूदनं स्कन्दमगस्त्यः परिपृच्छति ॥ 2 ॥**

भगवान् शिव के आत्मज पुत्र स्कन्दकुमार शान्त हैं और ज्ञान व शक्ति धारण करने वाले हैं। ऐसे देवताओं के शत्रुओं का विनाश करने वाले स्कन्द के प्रति अगस्त्य प्रश्न करते हैं और कहते हैं—

*श्रीअगस्त्योवाच —*

**भगवन्दर्शनात्तुभ्यमन्त्यजस्यापि सद्गतिः।**
**सप्तजन्मनि विप्रश्च स्वर्गाद् भ्रष्टः प्रजायते ॥ 3 ॥**
**तेनापि नाथ भूतानां सर्वेषामनुकम्पकः।**
**अतः संक्षेपतो धर्मं ब्रूहि सर्वहितं मम ॥ 4 ॥**

श्री अगस्त्य बोले— हे भगवन्! आपके दर्शनमात्र से अन्त्यज, नीचातिनीच व्यक्ति की भी सद्गति हो जाती है, सात जन्मों से स्वर्ग से भ्रष्ट हो चुके विप्रों और अन्य सभी पर भी हे नाथ! आप अनुकम्पा करने वाले हैं। अतएव आप धर्म के बारे में संक्षेप से उपदेश कीजिएगा जो मेरे और अन्य सभी के हित में हों।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and MoE



धर्मा बहुविधा देव्या देवेन कथिताः किल।
ते च श्रुता त्वया सर्वे पृच्छामि त्वामहं ततः॥ 5॥

बहुविध प्रकार के धर्म देवियों और देवताओं के बताए गए हैं। उन सभी को सुनकर ही मैं आपसे इस सम्बन्ध में यह प्रश्न कर रहा हूँ।

किं प्रधानाश्शिवे धर्माश्शिवनाक्यं च कीदृशम्।
शिवः लिङ्गेर्चितः केन विधिना सम्प्रसीदति॥
विद्यादानं च सर्वेषां दानानामुत्तमं किल॥ 6॥
तच्च श्रुतं द्विजेन्द्राणां नान्येषां समुदाहृतम्।
तत्पुण्यं सर्ववर्णानां जायते केन कर्मणा॥ 7॥

मैं जानना चाहता हूँ कि प्रधान शिवधर्म क्या है? शिवधर्म कैसा है? वह किस प्रकार का है? लिङ्ग की किस प्रकार की अर्चना से शिव प्रसन्न होते हैं? सभी दानों में विद्यादान उत्तम है— ऐसा सभी ब्राह्मणों से सुना है और किसी अन्य से ऐसा नहीं कहा गया है। यह पुण्य सभी वर्णों के लिए किस कर्म को करने से प्राप्त होता है?

ज्ञेयं कति विधं तच्च विद्यादानमनुत्तमम्।
कानि कृत्वैव कर्माणि गृहिणः स्वर्गताः पुनः॥ 8॥
मनुष्यलोके सम्भूता योगं विन्दन्ति शाङ्करम्।

यह अनुत्तम विद्यादान किस प्रकार ज्ञेय है? किन कर्मों के करने से गृहस्थगण स्वर्ग के सुखों को भोगकर पुनः मनुष्य लोक में जन्म लेकर भगवान् शङ्कर का योग प्राप्त करते हैं?

*पञ्चमहायज्ञनामानि —*

कर्मयज्ञ$_1$स्ततपोयज्ञः$_2$ स्वाध्यायो$_3$ ध्याननिवृत्तिः$_4$॥ 9॥
ज्ञानयज्ञश्च$_5$ पञ्चैते महायज्ञाः प्रकीर्तिताः।
एषां च पञ्चयज्ञानामुत्तमः कतमः स्मृतः॥ 10॥

यह सुना है कि 1. कर्मयज्ञ, 2. तपयज्ञ, 3. स्वाध्याययज्ञ, 4. ध्याननिवृत्ति और 5. ज्ञानयज्ञ— ये पाँच महायज्ञ कहे गए हैं। इन पाँच यज्ञों में उत्तम किस यज्ञ को कहा गया है?

एतद्यज्ञरतानां च प्रदाने कीदृशं फलम्।
धर्माधर्म प्रभेदाश्च कियन्तः परिकीर्तिताः॥ 11॥

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



उपर्युक्त पाँच प्रकार के यज्ञकर्मों में निरत रहने वालों को दान देने का क्या फल होता है? धर्म और अधर्म के प्रभेद के क्या अन्त कहे गए हैं?

**तत्साधनानिं कतिधा गतयश्च तदात्मकाः।**
**स्वर्गा नारकिणां पुंसामायतानां पुनः क्षितौ॥ 12॥**
**कानि चिह्नानि जायन्ते भुक्तशेषेण कर्मणा।**
**संसारसागराद्घोराद्धर्माधर्मोर्मि सङ्कुलात्॥ 13॥**
**गर्भादि दुःखफेनाद्वा मुच्यते देहिनः कथम्।**

उनके साधन कितनी तरह के हैं और उनकी गति क्या है? स्वर्ग और नरक से पुनः इस पृथ्वी पर आए हुए पुरुषों को किन चिह्नों से जाना जाए कि उनके शेष कर्म इस संसार सागर में भोगने से उद्धार होगा और इस सागर की अधर्म रूपी लहरों के समूह से निजात पाएँगे? यही नहीं, इस संसार सागर के फेन रूपी गर्भादि दुखों से देहियों की मुक्ति किस प्रकार होगी?

**इति संश्रोदितः स्कन्दः सम्प्रश्नार्थानुभावकः॥ 14॥**
**प्रत्युवाच महासेनः प्रणिपत्य महेश्वरम्।**

इस प्रकार के प्रश्नों से प्रेरित होकर स्कन्द ने भगवान् महेश्वर को प्रणाम करके पूछा था (और जो कुछ उत्तर स्वरूप जाना था, उसका कथन किया)।

*श्रीस्कन्दोवाच—*

**स्वर्गापवर्गफलदं नरकार्णवतारणम्॥ 15॥**
**शिवधर्मोत्तरं नाम शास्त्रमीश्वर भाषितम्।**

श्री स्कन्द बोले— स्वर्ग, अपवर्ग के फल को देने वाला और नरक के दुःख के सागर से तारने वाला 'शिवधर्मोत्तर' नामक पुराण शास्त्र साक्षात् ईश्वर द्वारा कहा गया है।

*अथ श्रद्धामाहात्म्य—*

**श्रद्धापूर्णा सर्वधर्मा श्रद्धा मध्यान्त संस्थिताः॥ 16॥**
**श्रद्धानिष्ठाप्रतिष्ठाश्च धर्मः श्रद्धैव कीर्तिताः।**
**श्रुतिमात्ररसाः सूक्ष्माः प्रधानपुरुषेश्वराः॥ 17॥**

इसके प्रति श्रद्धापूर्ण होकर और अपने धर्म में श्रद्धा को स्थिर रखना चाहिए। श्रद्धा, निष्ठा और प्रतिष्ठा है, श्रद्धा को धर्म कहा गया है। इसको समस्त श्रुतियों अथवा वेदों का सार और प्रधान ईश्वर का ही सूक्ष्म रूप कहा गया है।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and



**श्रद्धामात्रेण गृह्यन्ते नरकेना[ ति ] चक्षुषा।**
**कायक्लेशैर्नबहुभिः न चैवार्थ निराशिभिः॥ 18॥**

केवल श्रद्धा से ही नर अपने चक्षुओं से इसे ग्रहण कर सकते हैं। इसमें कोई बहुत बड़ा काय-क्लेश या कष्ट नहीं उठाना पड़ता है। इसके लिए न भूखा रहना पड़ता है न ही प्यास सहनी पड़ती है।

**धर्मः सम्प्राप्यते सूक्ष्मः श्रद्धाहीनैस्सुरैरपि।**
**श्रद्धाधर्मं परं सूक्ष्मं श्रद्धादानं हुतं तपः॥ 19॥**

यह श्रद्धा सूक्ष्मधर्मा है। इसको असुरों ने भी प्राप्त किया था। श्रद्धाधर्म परम सूक्ष्म है। श्रद्धा से ही दान, हुत या यज्ञ और तप (की सार्थकता होती) है।

**श्रद्धा स्वर्गश्च मोक्षश्च श्रद्धा सर्वमिदं जगत्।**
**सर्वस्वं जीवितं चापि दद्याद् श्रद्धया यदि॥ 20॥**

श्रद्धा ही स्वर्ग है, श्रद्धा ही मोक्ष है। श्रद्धा यह समस्त जगत् है। यही नहीं, सभी का जीवित रहना भी श्रद्धा से ही दिया गया है।

**न प्राप्नुयात् फलं किञ्चित् श्रद्धादानं ततो भवेत्।**
**एवं श्रद्धामयास्सर्वे शिवधर्माः प्रकीर्तिताः॥ 21॥**
**शिवश्च श्रद्धया गम्यः पूज्यो ध्येयश्च श्रद्धया।**

तथापि उसका कोई फल नहीं चाहा गया हो तो उसे श्रद्धादान होना कहा जाता है। इस तरह की श्रद्धा रखने वाले सभी शिवधर्मा कहे गए हैं। भगवान् शिव श्रद्धा से ही गम्य या प्राप्त होते हैं। अतः उन्हें ध्येयपूर्वक श्रद्धा रखते हुए पूजना चाहिए।

*शिवमन्त्रमाहात्म्य—*

**[ अल्पाक्षरं महार्थं च वेदसारं विमुक्तिदम्। ]**
**आज्ञासिद्धमसंदिग्धं वाक्यमेतच्छिवात्मकम्॥ 22॥**[1]

(उन शिव का मन्त्र) अल्प अक्षरों वाला किन्तु महान् अर्थ वाला, वेद का सार और मुक्ति प्रदान करने वाला है। यह आज्ञासिद्ध है और असन्दिग्ध है, क्योंकि यह वचन स्वयं भगवान् शिव का है।

**नानासिद्धियुतं दिव्यं लोकचित्तानुरञ्जनम्।**
**सुनिश्चितार्थ गम्भीरं वाक्यं [2]गाणेश्वरं स्मृतम्॥ 23॥**

---

1. तुल.— लिङ्ग. पूर्व. 85, 29
2. तुल.— ० मे पारमेश्वरम्। इति लिङ्ग. पाठः। पूर्व. 85, 30

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



यह नाना प्रकार की सिद्धियों से युक्त है, दिव्य है और लोकों के चित्त को अनुरंजित करने वाला है। यह गम्भीर और सुनिश्चितार्थ वाला है तथा गाणेश्वर या शिव का वाक्य कहा जाता है।

**मन्त्रं मुखसुखोच्चार्यमशेषार्थप्रसाधकम्।**
**प्राहोन्नमः शिवायेति स( शिव! )स्सर्व देहिनाम्॥ 24॥**[3]

(शिव) मन्त्र सुखपूर्वक मुख से उच्चारित हो सकता है और अशेष प्रसाद या पूरा आनन्द देने वाला है। अतः सभी देहधारी इसको 'नमः शिवाय' कहते हैं।

**सहजं सर्वलोकानां मन्त्रमाद्यं षडक्षरम्।**
**अतिसूक्ष्मं महार्थं च ज्ञेयं तद्वटबीजवत्॥ 25॥**[4]

यह (ॐ सहित) षडक्षर होने पर अर्थात् 'ॐ नमः शिवाय' रूप में सभी लोकों के लिए सहज है। यह अति सूक्ष्म होते हुए भी महान् अर्थ का द्योतक है। इसको वटवृक्ष के बीज के समान समझें जो सूक्ष्म होकर भी बड़े वृक्ष का कारक होता है।

**देवो गुणत्रयातीतः सर्वज्ञस्सर्व कृत्प्रभुः।**
**ओमित्येकाक्षरं मन्त्रे स्थितः सर्वगतः शिवः॥ 26॥**[5]

भगवान् शिव तीनों ही गुणों— सत्त्व, रज और तम से अतीत हैं। वे सर्वज्ञ हैं। वे सर्वकर्ता हैं। वे स्वामी हैं और ॐ नामक एक अक्षर के मन्त्र में स्थित रहकर सबमें समाए हुए हैं।

**ईशानाद्यानि सूक्ष्माणि ब्रह्माण्येकाक्षराणि तु।**
**मन्त्रे नमः शिवायेति संस्थितानि यथाक्रमम्॥ 27॥**[6]

ईशान आदि देव सूक्ष्म रूप से ब्रह्म के एकाक्षर में मन्त्र 'ॐ नमः शिवाय' इस यथाक्रम से स्थित हैं।

**मन्त्रे षडक्षरे सूक्ष्मः पञ्चब्रह्मतनुः शिवः।**
**वाच्यवाचकभावेन स्थितः साक्षात्स्वभावतः॥ 28॥**[7]

---

3. 'मन्त्र सुखमुखोच्चार्यमशेषार्थप्रसादकम्।' इति मूलपाठः। तुल.— लिङ्ग. पूर्व. 85, 31
4. तुल.— लिङ्ग. पूर्व. 85, 32
5. तुल.—वेदः स त्रिगुणातीतः सर्वज्ञः सर्वकृत्प्रभुः॥ ओमित्येक्षरं मन्त्रं स्थितः सर्वगतः शिवः। लिङ्ग. पूर्व. 85, 32-33
6. तुल.— शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 9
7. मन्त्रे षडक्षरे सूक्ष्मे पञ्चाक्षरतनुः शिवः। लिङ्ग. पूर्व. 85, 33-34; शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 9-10



Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and MoE



यह षडक्षर मन्त्र भगवान् शिव का ही सूक्ष्म रूप में पञ्चब्रह्मतनु (पञ्चाक्षर काय) कहा गया हैं। इसमें वाच्य और वाचक के भाव से साक्षात् शिव स्वभाव से ही स्थित रहते हैं।

**वाच्यः शिवः प्रमेयत्वान्मन्त्रस्तद्वाचकः स्मृतः।**
**वाच्यवाचकभावोऽयमनादिः संस्थितस्तयोः॥ 29॥**[8]

प्रमेयत्व के कारण शिव वाच्य हैं तथा मन्त्र उनका वाचक कहा गया है। इन दोनों का यह वाच्य-वाचक स्थिति भाव अनादिकाल से चला आ रहा है।

**यथाऽनादिप्रवृत्तोऽयं घोरः संसारसागरः।**
**शिवोऽपि हि तथानादिः संसारान्मोचकस्स्मृतः॥ 30॥**[9]

जिस प्रकार से यह घोर संसार सागर अनादि काल से प्रवृत्त है, उसी तरह भगवान् शिव भी अनादि काल से उस संसार सागर से मुक्ति दिलाने वाले हैं, ऐसा कहा जाता है।

**व्याधीनां भेषजं यद्वत् प्रतिपक्षः स्वभावतः।**
**तद्वत्संसारदोषाणां प्रतिपक्षः शिवः स्मृतः॥ 31॥**[10]

व्याधियों के लिए जिस प्रकार औषध स्वभाव से ही विरोधी है, उसी प्रकार संसार के सभी दोषों-दुखों के लिए भगवान् शिव प्रतिपक्ष या विरोधी हैं। वे दुःख मिटाने वाले हैं।

**असत्यस्मिन् जगन्नाथे तमोभूतमिदं भवेत्।**[11]
**आदित्येन विहीनं हि निरालोक्यं जगद्यथा॥ 32॥**

भगवान् शिव के इस जगत के स्वामी नहीं होने पर यह सब अन्धकार मात्र हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे सूर्य के बिना यह जगत प्रकाश रहित या अन्धकार से आच्छन्न हो जाता है।

**तस्मादनादिः सर्वज्ञः परिपूर्णः स्वभावतः।**
**मूर्तिहेतुः शिवः सिद्धः सर्वज्ञो ज्ञानभासकः॥ 33॥**

---

8. तुल.— लिङ्ग. पूर्व., 85, 34; शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 10-11
9. तुल.— शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 11-12
10. तुल.— शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 12-13
11. तुल.— शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 13

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



इसलिए स्वभाव से ही परिपूर्ण अनादि, सर्वज्ञमूर्ति के रूप में भगवान् शिव ही सिद्ध, सर्वज्ञ और ज्ञान के भासक या प्रकाश करने वाले हैं।

**तस्याभिधानमन्त्रोऽयमभिधेयश्च स स्मृतः।**
**अभिधानाभिधेयत्वान्मन्त्रा सिद्धः परः शिवः॥ 34॥**[12]

उन भगवान् शिव का अभिधान मन्त्र अर्थात् नामजप का यह मन्त्र अवश्य अभिधेय होना चाहिए अर्थात् अभ्यास में रहना चाहिए। इसको अच्छी तरह स्मरण में रखना चाहिए क्योंकि अभिधान या नाम और अभिधेय या नामी के सम्बन्ध से ही परमशिव का मन्त्र सिद्ध होता है।

**वेदे शिवागमे चैवमुभयत्र षडक्षरः।**
**मन्त्रः स्थितः सदां वक्त्रे लोके पञ्चाक्षरः स्मृतः॥ 35॥**[13]

वेद और शिवागम (शैव आगम प्रमाण ग्रन्थ) दोनों में ही यह मन्त्र षडक्षर (ॐ नमः शिवाय) के रूप में स्थित है किन्तु लोक में मुख पर यह सदा पञ्चाक्षर (नमः शिवाय) के रूप में कहा गया है।

**किं तस्य बहुभिर्मन्त्रैः शास्त्रैर्वा बहुविस्तरैः।**
**यस्योन्नमः शिवायेति मन्त्रोऽयं हृदि संस्थितः॥ 36॥**
**तेनाधीतं श्रुतं तेन तेन सर्वमधिष्ठितम्।**[14]
**येनोन्नमः शिवायेति मन्त्राभ्यासः स्थिरीकृतः॥ 37॥**

अतएव बहुत से मन्त्रों से उस साधक का क्या प्रयोजन है और अति विस्तृत शास्त्रों के प्रयोग से क्या उसका क्या अभिप्राय है, जिसके हृदय में यह 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र स्थित होता है। उसने तो मानो वेदों का अध्ययन कर लिया और सब कुछ अधिष्ठित कर लिया जिसने अपने को इस 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र के अभ्यास से स्थिरीकृत कर रखा हो।

**शिवज्ञानानि यावन्ति विद्यास्थानानि यानि च।**
**षडक्षरस्य सूत्रस्य तानि भाष्यं समासतः॥ 38॥**[15]

---

12. तुल.— शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 19
13. तुल.— वेदे शिवागमे वापि यत्र यत्र षडक्षरः॥ मन्त्रः स्थितः सदां मुख्यो लोके पञ्चाक्षरो मतः। लिङ्ग. पूर्व. 85, 35-36; शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 3
14. तुल.— यस्यैव हृदि संस्थोयं मन्त्रः स्यात् पारमेश्वरः। तेनाधीतं श्रुतं तेन तेन सर्वमनुष्ठितम्॥ लिङ्ग. पूर्व. 85, 37; शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 34-35
15. तुल.— शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 33

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



जितने शिवज्ञान हैं और जितने भी विद्यास्थान (ग्रन्थ प्रमाण) कहे गए हैं, वे सब इस षडक्षर सूत्र 'ॐ नमः शिवाय' के ही संक्षिप्त भाष्य बताए गए है।

**एतावद्धि शिवज्ञानं एतस्मात्परमं पदम्।**
**यदोन्नमः शिवायेति शिववाक्यं षडक्षरम्॥ 39॥**[16]

मात्र यही मन्त्र एक शिवज्ञान है। यही परमपद है। यही 'ॐ नमः शिवायः' षडक्षरी शिववाक्य है।

**विधिवाक्यमिदं शैवं नार्थवादं शिवात्मकम्।**
**लोकानुग्रहकर्ता यः स मृषार्थं कथं वदेत्॥ 40॥**[17]

यह शिव द्वारा कथित शिवात्मक विधिवाक्य है, न कि अर्थवाद है। शिव संसार के लिए अनुग्रहकर्ता है, ऐसे में उनका कहना मिथ्या कैसे हो सकता है।

**सर्वज्ञः परिपूर्णस्तुदन्यथा केन हेतुना।**
**ब्रूयाद्वाक्यं शिवः शान्तः सर्वदोषविवर्जितः॥ 41॥**

यह सर्वज्ञ का परिपूर्णमन्त्र है, अतः अन्यथा कैसे हो सकता है। इस मन्त्र-वाक्य का उच्चारण करते ही भगवान् शिव सब दोषों को मिटाकर शान्ति कर देते हैं।

*गुणानुसारद्रव्यफलम् —*

**यद्यथाऽवस्थितं वस्तु गुणदोषैः स्वभावतः।**
**यावत्फलं च तत्पूर्णं च सर्वज्ञस्तु यथा वदेत्**[18]**॥ 42॥**

जो वस्तु जिस अवस्था वाली है और जिन स्वाभाविक गुण-दोषों वाली है, उनका फल भी उनके अनुसार ही पूर्ण रूप से सर्वज्ञ द्वारा वैसा ही कहा गया है।

**रागद्वेषादिभिर्दोषैर्ग्रस्तत्वादनृतं वदेत्।**
**ते चेश्वरे न विद्यन्ते ब्रूयात्सकथमन्यथा॥ 43॥**[19]

राग, द्वेष इत्यादि दोषों से ग्रसित व्यक्ति मिथ्या ही भाषण करता है। ये गुण ईश्वर में नहीं होते हैं, ऐसे में उनका कथन अन्यथा नहीं हो सकता है।

---

16. तुल.— एतावत्तु शिवज्ञानमेतावत्परमं पदम्। यदोन्नमः शिवायेति शिववाक्यं षडक्षरम्॥ शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 20
17. तुल.— अर्धश्लोकोपरान्त शिवपुराणायां 'यः सर्वत्र सुसम्पूर्णः स्वभावविमलः शिवः' इत्यधिकपाठः। वायवीय. उत्तर. 12, 21-22
18. तुल.—शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 22-23
19. तुल.— 'रागज्ञानादिभिर्दोषैर्ग्रस्तत्वादनृतं वदेत्।' इति प्रथमपंक्तिपाठः। शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 2

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



**अज्ञाताशेषदोषेण सर्वज्ञेन शिवेन यत्।**
**प्रणीतममलं वाक्यं तत्प्रमाणं न संशयः॥ 44॥**[20]

समस्त दोषों से रहित सर्वज्ञ शिव द्वारा कहे गए वाक्य निर्मल रूप से प्रणीत और प्रमाण रूप होते हैं, इसमें कोई संशय नहीं है।

**तस्मादीश्वरवाक्यानि श्रद्धेयानि विपश्चिता।**
**यथार्थपुण्यपापेषु तदश्रद्धो व्रजत्यधः॥ 45॥**[21]

इसलिए विद्वान् को ईश्वर के वाक्यों के प्रति श्रद्धा रखनी चाहिए। पुण्य और पाप में उचित रूप से श्रद्धा नहीं रखने वाला व्यक्ति नरकगामी होता है।

*शासकप्रतिकर्तव्यकथनम् —*

**शिववाक्य प्रवक्तारं शिववत्पूजयेद्गुरुम्।**
**नृपः परोपकाराय स्वात्मानश्च विभूतये॥ 46॥**

शिव विषयक वचनों के प्रवक्ता को शिव के समान ही मानकर गुरुपूजन करना चाहिए। शासक को भी परोपकार और अपनी विभूति अथवा उन्नति के लिए ऐसा करना चाहिए।

**जगद्धिताय नृपतिं शिवधर्मो नियोजयेत्।**
**तन्नियोगादयं लोकः शुचिः सयाद्धर्म तत्परः॥ 47॥**

जगत के हित के लिए शासक को चाहिए कि वह शैवधर्म को नियोजित-प्रचारित करें। इस तरह से नियोजित-प्रबन्धित करने से यह लोक पवित्र और धर्म में तत्पर हो सकेगा।

**यं यं धर्मं नरश्रेष्ठः समाचरति भक्तितः।**
**तत्तं समाचरेल्लोकस्तत्प्रामाण्याद्भयेन वा॥ 48॥**

जिस-जिस धर्म को नरश्रेष्ठ राजा भक्तिपूर्वक अपने आचरण में लाते हैं, वैसा ही लोक भी उसे प्रमाण मानकर अनुवर्तन करने लगता है अथवा भय से भी अंगीकार करता है।

**धर्मनिष्ठः कृतो राजा धर्मवादैक [ भवं ] सतः।**

---

20. तुल.— एतावत्तु शिवज्ञानमेतावत्परमं पदम्। यदोन्नमः शिवायेति शिववाक्यं षडक्षरम्॥ शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 24
21. तुल.— शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 25

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



**युगत्रयः सविज्ञेयस्तस्माद्राजा चतुर्युगम्॥ 49॥**

धर्मनिष्ठ होकर राजा धार्मिकता वाले सतयुग को लाता है। इसी तरह राजा की निष्ठा पर ही तीन युगों की निर्भरता को जानना चाहिए। चौथा युग तो राजा जानें।

**धर्मज्ञः सत( तं ) राजा प्रजा न्यायेन पालयेत्।**
**न्यायतः पालयमानन्तु ध्यायन्ति स्वामिनं शिवम्॥ 50॥**

शासक को धर्मज्ञ होकर प्रजा का निरन्तर न्यायपूर्वक पालन करना चाहिए। न्यायपूर्वक पालन से ही प्रजा अपने स्वामी शिव का ध्यान करती है।

**धर्ममर्थं च कामं च यदन्य [ फल ]मीहते।**
**तत्तदाप्नोत्ययं तेन प्रजान्यायेन पालयेत्॥ 51॥**

धर्म, अर्थ, काम और अन्य जो भी फल महत्व के हैं, वे सभी कुछ इससे प्राप्त होते हैं। अतः प्रजा को न्यायपूर्वक पालना चाहिए।

**पूजासु धर्मनिष्ठासु षष्ठमं च भजेन्नृपः।**
**अधमिष्ठात्स्वधर्मस्य चतुर्थांशेन लिप्यते॥ 52॥**

प्रजा में धर्म के प्रति निष्ठा होने से राजा उसका षष्ठमांश प्राप्त करता है और यदि प्रजा अधर्मनिष्ठ हो जाए तो राजा को उसका चतुर्थांश भोगना पड़ता है।

**तस्मादधर्मे मज्जन्तं लोकं राजा निवारयेत्।**
**शिवे नियोजयेन्नित्यमभयार्थं विचक्षणः॥ 53॥**

इसलिए राजा लोक को अधर्म में डूबने से बचाएँ। उसको शिवधर्म में नियोजित करें और विचक्षण राजा उसे नित्य अभयार्थ बनाएँ।

**धर्मशीले नृपे यस्मात् पूजास्युद्धर्म तत्पराः।**
**नृपतिं बोधये तस्मात्सर्वलोकानुकम्पया॥ 54॥**

इस प्रकार धर्मशील राजा भी पूजाविधान से धर्म में तत्पर रहकर सभी लोकों को अपनी अनुकम्पा से बोध प्रदान कर सकेगा।

**उपायेन भयाल्लोभात् मूर्खान् सदानुबोधयेत्।**
**मन्त्रौषधिक्रियाद्यैर्वालुब्धान् धर्मे निवेशयेत्॥ 55॥**
**मन्त्रौषधिनिधिक्षेत्रं फ( बि! )लमूलरसक्रियाः।**
**धर्ममार्गावताराय धर्मो( वादोऽ )ष्टाङ्गः प्रकीर्तितः॥ 56॥**

राजा को चाहिए कि वह मूढ़ लोगों के लिए भय, लोभादि के साथ सदा बोध

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



प्रदान करने के उपाय करें। साथ ही मन्त्रविधि अथवा औषधक्रिया से भी लोभी जनों को धर्म के मार्ग में निवेशित करें। मन्त्र, औषध, कोश, खेत, फल-मूल, रस-क्रिया से लोक को धर्ममार्ग पर अनुसरण कराएँ। इसी हेतु ये धर्म के अष्टांगवाद कहे गए हैं।

**प्रत्याय्याष्टाङ्गवादेन कामार्थाभिरतं नृपम्।**
**शनैर्धर्मे नियुञ्जीत ज्ञानयोगे पुनः क्रमात्॥ 57॥**
**एवं यः सर्वयत्नेन राजानं बोधयेद् बुधः।**
**जगद्गुरुः स विज्ञेयः सर्वलोकानुकम्पकः॥ 58॥**

यदि कभी कोई राजा धर्म के अष्टांगवाद से विमुख हो जाए और काम तथा अर्थ में अभिरत हो जाए तो उसे धीरे-धीरे धर्म की ओर जोड़ने का ज्ञानयोग से क्रमशः प्रयास करना चाहिए— इस प्रकार के सभी यत्नों से बुद्धिमान् राजा को समझाएँ। ऐसे ही पण्डित जगद्गुरु कहलाते हैं और लोक पर अनुकम्पा करने वाले होते हैं।

**संसार पङ्कनिर्मग्नं यस्समुद्धरते जनम्।**
**शिवज्ञानात्म हस्तेन कस्तेन सदृशः पिता॥ 59॥**

वे प्रजाजनों को इस संसार के कीचड़ से डूबने से बचाते और उद्धार करते हैं। अपने शिवज्ञान रूपी हाथ से उबारने वाले इन गुरुओं की बराबरी करने वाला अन्य कौन पिता के समान हो सकता है?

**अज्ञानवह्निसन्तप्तं निर्यापयति यः शनैः।**
**ज्ञानामृतेन नृपतिं कस्तं न प्रति पूजयेत्॥ 60॥**

अज्ञान रूपी आग में तपे हुओं को जो धीरे-धीरे निजात दिलाते हैं और जो राजा अपने ज्ञानामृत से यह सब करते-कराते हैं, उनकी पूजा क्यों नहीं की जाए, अवश्य ही वे पूजनीय हैं।

*सुभाषितमहिमा —*

**नैव राज्येन महत्ता न चैवार्थस्य राशिभिः।**
**प्राप्यमज्ञानशमनं परलोक सुभाषितम्॥ 61॥**

यह ज्ञातव्य है कि न तो राज्य की महत्ता है और न ही धन राशि की महिमा है, मात्र अज्ञान के निवारण करने वाले और परलोक में सुख प्रदान करने वाले सुभाषित ही महत्व के होते हैं।

**स्वर्गापवर्गसिद्ध्यर्थं भाषितं यत्सुशोभनम्।**

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



**वाक्यं मुनिवरैः शान्तैस्तद्विज्ञेयं सुभाषितम्॥ 62॥**[22]

स्वर्ग और मोक्ष की सिद्धि के निमित्त जिन शोभाजनक वाक्यों को शान्तचित्त मुनिवरों ने कहा है, उनको सुभाषित वचन समझना चाहिए।

**रागद्वेषानृतक्रोधकामतृष्णानुसारि यत्॥ 63॥**
**वाक्यं निरयहेतुत्वात्तद्दुर्भाषितमुच्यते।**[23]

राग, द्वेष, झूठ, क्रोध, काम और तृष्णा से युक्त जो वाक्य कहे जाते हैं, वे नरक के हेतु होते हैं। अतः उनको दुर्भाषित कहा जाता है।

**संस्कृतेनापि किं तेन मृदुना ललितेन वा॥ 64॥**
**अविद्यारागवाक्येन संसार क्लेशहेतुना।**
**यच्छ्रुत्वा जायते पुण्यं रागादीनां च सङ्क्षयः॥ 65॥**
**विरूपमपि तद्वाक्यं विज्ञेयमिति शोभनम्।**[24]

संस्कृत अथवा संस्कार से युक्त, मृदु अथवा ललित उन वचनों से क्या लाभ, जो अविद्या और राग से युक्त होने के कारण संसार में कष्टप्रदायक कहे जाते हैं। जिन वचनों को सुनने से पुण्य प्राप्त होता है और राग आदि दोषों का क्षय होता है, यद्यपि वे सुनने में अच्छे नहीं लगते हों किन्तु वे वाक्य अति शोभाजनक होते हैं।

**पुराणं भारतं वेदं शास्त्राणि सुबहूनि च॥ 66॥**
**आयुष क्षयणायैव धर्मोल्पग्रन्थसंस्थितः।**
**पुत्रदारादि संसारः पुंसां सम्मूढचेतसाम्॥ 67॥**

पुराण, महाभारत, वेद और ऐसे ही अनेकानेक शास्त्र हैं जिनको पढ़ते-पढ़ते आयु क्षीण हो जाती है किन्तु उन ग्रन्थों में धर्मचर्चा बहुत ही अल्प मात्रा में संगृहीत मिल पाती है (क्योंकि पाठक क्रिया और कथादि में ही रस लेता है)। पुत्र, पत्नी आदि सांसारिक सम्बन्ध व्यक्ति को मूढ़चेता या मोहग्रस्त बनाए हुए हैं।

**विदुषां शास्त्रसंसारः स योगाभ्यास विघ्नकृत्।**
**इदं ज्ञेयमिदं ज्ञेयं यः सर्वज्ञानमिच्छति॥ 68॥**

विद्वानों के लिए यह शास्त्र का संसार है, योगाभ्यास में विघ्नकारी है क्योंकि

---

22. इत्यमनन्तरे 'विरूपमपि तद्वाक्यं विज्ञेयमिति शोभनम्।' इति मूलपाठे। तुल.— शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 25
23. तुल.— शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 27
24. तुल.— शिव. वायवीय. उत्तर. 12, 28-29

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE


यह जानें कि यह जानें? ऐसा सोच-सोचकर सर्वज्ञान बटोरने की इच्छाएँ भटकाती रहती है।

**अपि वर्ण सहस्रायुः शास्त्रान्तं नाधिगच्छति।**
**विज्ञायक्षरतं मात्रं जीवितं चापि चञ्चलम्॥ 69॥**

आयु यदि हजार वर्ष भी हो जाए तो भी इन शास्त्रों का अन्त नहीं पाया जा सकता, ऐसे शास्त्रप्रेमी केवल अक्षरज्ञान करते हुए ही अपना चंचल जीवन बिताते हैं।

**विहाय शास्त्रजालानि पारलौकिकमाचरेत्।**
**पण्डिते नापि किं तेन समर्थेन च देहिना॥ 70॥**

ऐसे में शास्त्रों के जाल को छोड़कर पारलौकिक आचरण करना चाहिए क्योंकि पण्डिताई और समर्थदेही होने का लाभ ही क्या है?

**यः पुण्यभारमुद्वोढुमक्तः पारलौकिकम्।**
**पण्डितोऽपि स मूर्खः स्यात् शक्तियुक्तोप्यशक्तिकः॥ 71॥**

जो पारलौकिक पुण्यभार को वहन करने में असमर्थ है, वह पण्डित होकर भी मूर्ख है और शक्तिमान् होकर भी अशक्त ही है।

**यः संसारात् स्वमात्मानमुत्तरायितुमक्षयः।**
**तस्मात्सनिन्दितः शक्तः समनस्वी जितेन्द्रियः॥ 72॥**

जो इस संसार-सागर से अपने को और अपनी आत्मा को तारने में अक्षम है, वह निन्दा का पात्र है और जो तार सकता है वह सशक्त, मनस्वी और जितेन्द्रिय है।

**यः शिव ज्ञान सद्भावमालोचयितुमुद्यतः।**
**यः प्रपद्यान्महीं कृत्स्नां महामेरुं च काञ्चनम्॥ 73॥**

जो व्यक्ति शिवज्ञान को सद्भावपूर्वक देखने के प्रति उद्यत रहता है, वह सारी पृथ्वी को ही महान् मेरुपर्वत के समान कांचन की बना सकता है।

**रुचि व न्यायतः पृच्छे न तस्योपदिशेद्गुरुः।**
**यः शृणोति शिवज्ञानं न्यायतः तत्प्रवर्ति च॥ 74॥**
**तौ गच्छतः शिवज्ञानं नरकं तद्विपर्यये।**

जो कोई रुचि लेकर न्यायपूर्वक प्रश्न करता हो, गुरु को चाहिए कि उसको अपने सदुपदेश से कृतार्थ करें। जो व्यक्ति शिव विषयक ज्ञान को न्यायपूर्वक सुनता है और उसमें प्रवृत्ति करता है, वह सदा इस शिवज्ञान से नरक के विपरीत स्वर्गलोक में जाता है।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



**अथवा देह सम्भूतः षडङ्गविधिना शिवः॥ 75॥**
**लिङ्गे सम्पूजितः शीघ्रं नराणां सम्प्रसीदति।**

अथवा, ऐसा शिवसाधक षडंग विधि से शिव होकर इस देह में रहता है। यह सच है कि शिवलिंग के पूजन से भगवान् शिव लोगों पर शीघ्र ही प्रसन्न होते हैं।

*गोषडङ्गविधिवर्णनम् —*

**सुरासुरैर्मथ्यमानात् क्षीरोदात् सागरोत्तमात्॥ 76॥**
**पञ्चगावः समुत्पन्नास्सर्वलोकस्य मातरः।**
**नन्दा भद्रा च सुरभिः सुशीला सुमनया॥ 77॥**

पूर्वकाल में देवताओं और दानवों ने मिलकर क्षीरसागर का मन्थन किया था। उसमें से पाँच गायें उत्पन्न हुईं— 1. नन्दा, 2. भद्रा, 3. सुरभि, 4. सुशीला और 5. सुमनया। ये पाँचों सभी लोकों की माताएँ हैं।

**पञ्चगावः शिवपुरात्क्षितिं प्राप्ताः शिवेच्छया।**
**सर्वलोकोपकारार्थं देवानां तर्पणाय च॥ 78॥**

ये पाँचों गायें भगवान् शिव के पुर से शिव की इच्छा से ही इस पृथ्वीलोक को प्राप्त हुईं। वे समस्त लोकों के उपकार और देवताओं के निमित्त तर्पण के लिए हैं।

**गोमातरः स्थिता भूमौ स्नानार्थं च शिवस्य च।**
**गोमयं रोचनमूत्रं क्षीरं दधि घृतं गवाम्॥ 79॥**
**षडङ्गानि पवित्राणि सर्वसिद्धिकराणि च।**

ये गोमाताएँ भूमिलोक में स्थित रहकर शिव के स्नान के लिए 1. गोमय, 2. गोरोचन, 3. गोमूत्र, 4. दूध, 5. दही और 6. गोघृत प्रदान करती हैं। ये छहों वस्तुएँ पवित्र हैं और समस्त सिद्धियों को करने वाली हैं।

**गोमयादुत्थितं श्रीमान् बिल्ववृक्षः[25] शिवप्रियः॥ 80॥**
**तत्रास्ते पद्महस्ता श्रीः श्रीवृक्षस्तेन सस्मृतः।**
**बीजान्युत्पल पद्मानां पुनर्जानाति गोमयात्॥ 81॥**

गोमय (गोबर) से उत्पन्न श्रीमान् बिल्ववृक्ष शिव को अति ही प्रिय है। वहीं पर कमल को धारण करने वाली श्री अर्थात् लक्ष्मीदेवी विराजमान रहती है, ऐसे

---

25. श्रीसूक्त में आया है कि महालक्ष्मी के तप के प्रभाव से पुष्प के बिना ही फल देने वाले बिल्ववृक्ष की उत्पत्ति हुई— आदित्यवर्णे तपसोऽधि जातो वनस्पतिस्तव वृक्षोऽथ बिल्वः। (श्रीसूक्त श्लोक 6)

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



में उसको श्रीवृक्ष भी कहा जाता है। उसके धारण किए उत्पल या कमलों के बीजों से पुनः गोबर के संयोग से कमल ही उत्पन्न होते हैं।

**गोरोचना च माङ्गल्या पवित्रा सर्वसिद्धिदा।**
**गोमूत्राद्गुग्गुलुर्जातः सुगन्धः प्रियदर्शनः॥ 82॥**

गाय से प्राप्त गोरोचन मंगलपूर्ण, पवित्र और सर्वसिद्धिदायक द्रव्य है। गोमूत्र और गुग्गुल से होने वाली सुगन्ध प्रियजनक होती है।

**आहारः सर्वदेवानां शिवस्य च विशेषतः।**
**यद्बीजं जगतः किञ्चित्तज्ज्ञेयं क्षीर सम्भवम्॥ 83॥**

सभी देवताओं का आहार और विशेषकर शिव का नैवेद्य जो सारे जगत का कदाचित् बीज है, वह सब गाय के क्षीर या दूध से ही सम्भव है।

**दध्नः सर्वाणि जातानि माङ्गल्यान्यर्थसिद्धये।**
**घृतादमृतमुद्भूतममराणामतिप्रियम् ॥ 84॥**

दही से सभी उत्पन्नों का मंगल होता है, अन्य किसी द्रव्य से ऐसा सिद्ध नहीं हो पाता। घी से ही अमृत उत्पन्न हुआ है जो कि देवताओं को बहुत ही प्रिय है।

**तस्माद्घृतेन पयसा दध्ना च स्नापयेच्छिवम्।**
**तदन्ते चोष्णतोयेन कषायैश्च विरुक्षयेत्॥ 85॥**

इसलिए घृत से, दूध से और दही से भगवान् शिव को स्नान करवाएँ। इसके बाद गर्म जल और वृक्षजन्य कषायों से स्नान करवाएँ।

**स्नाप्य शीताम्बुना पश्चात् लिङ्गं रोचनया लिपेत्।**
**पूजयेद्बिल्वपत्रैश्च पद्मैर्नीलोत्पलैरपि॥ 86॥**

पुनः शीतल जल से स्नान कराकर लिंग को गोरोचन का लेप लगाएँ और बिल्वपत्रों अथवा नीलकमल के पुष्पों से पूजा करें।

**अर्चयित्वा दहेत्पश्चाद्घृतयुक्तं च गुग्गुलम्।**
**पायसं दधिभक्तं च घृतं दध्ना परिप्लुतम्॥ 87॥**
**निवेदयेच्छिवायैतन् भक्ष्यं च घृतपाचितम्।**
**कृत्वा प्रदक्षिणं चान्ते प्रणिपत्य क्षमापयेत्॥ 88॥**

अर्चन-पूजन के उपरान्त घृत के साथ गुग्गुल जलाकर उसकी धूप करनी चाहिए। बाद में खीर, दहीभात, घृत, दूध से भरपूर सामग्री शिव को निवेदित करनी

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



चाहिए। यह भक्ष्य योग्य सामग्री घी में पकाई हुई होनी चाहिए। इसके पश्चात् शिवलिंग की प्रदक्षिण करें और साष्टांग प्रणामकर क्षमाप्रार्थना करनी चाहिए।

**अनेन विधिना देवः षडङ्गेन प्रसीदति।**
**इहलोके परे चैव सर्वकामान्प्रयच्छति॥ 89॥**

इस षडंग विधि से पूजा करने पर महादेव प्रसन्न होते हैं और वे इस लोक और परलोक की कामनाएँ पूरी करते हैं।

**षडङ्गविधिना तस्मान्नृपतिः पूजयेच्छिवम्।**
**शिवभक्तः समुत्तार्य कुलानामेकविंशतिम्॥ 90॥**

राजा को भी इस षडंग विधि से भगवान् शिव की पूजा करनी चाहिए। ऐसा शिवभक्त अपने इक्कीस कुलों को तार देता है।

**स्वर्गे स्थाप्य स्वयं गच्छेदैश्वरं परमं पदम्।**
**आश्रिताः सर्वभृत्याश्च देवकार्ये नियोजिताः॥ 91॥**

वह इससे अपनी स्वयमेव स्थापना स्वर्ग में करके ईश्वर के परमपद को जाता है। अतः अपने आश्रितों और सभी सेवकों को भी देवकार्यार्थ नियोजित करना चाहिए।

**प्रयान्ति स्वामिना सार्धं श्रीमच्छिवपुरं महत्।**
**भुक्ता तत्रातुलान्भोगान् भृत्यवर्गसमन्वितः॥ 92॥**
**कालात् पुनरिहायातः पृथिव्यामेकराद्भवेत्।**

ऐसा करने से वे सब भी अपने स्वामी के साथ महान् शिवपुर या शिवलोक को जाते हैं और वहाँ के अतुलनीय भोगों को सेवकगणों सहित भोगते हैं। उचित काल बीतने के बाद वे पुनः एक साथ इस भूलोक पर आते हैं।

**वृक्षः पुष्पाङ्गपत्राद्यैः उपयुक्ताः शिवार्चने॥ 93॥**
**शिवभावाच्च गच्छन्ति रुद्रलोकं न संशयः।**
**पूज्यत पूज्यमानं वा यः पश्येच्छ्रद्धया शिवम्॥ 94॥**
**सोऽपि यागफलं कृत्स्नं प्राप्नुयान्नात्र संशयः।**

वृक्ष और उनके शाखादि अंगों सहित फूल-पत्ते जो भी शिवार्चन में प्रयुक्त होते हैं, वे भी शिवभाव में रहते हुए रुद्रलोक को जाते हैं, इसमें संशय नहीं है। पूजते हुए, पूज्यमान शिव को जो श्रद्धा से देखता है, वह भी पूरे यज्ञ का फल प्राप्त करता है, इसमें संशय नहीं जानना चाहिए।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



**श्रुत्वा तु मोदते पुण्यमैश्वरं यः समाधिना॥ 95॥**
**फलं तत्सममाप्नोति पूजयेच्छक्तितः शिवम्।**
**श्रुत्वा तु मुमुदे यस्ते स च योगफलं लभेत्॥ 96॥**

जो भगवान् शिव की महिमा को सुनकर प्रसन्न होता है और पुण्य प्राप्त करके समाधि में ईश्वर दर्शन करता है, वह शिव-शक्ति के पूजन का फल प्राप्त करता है। जो शिव महिमा सुनकर मुदित होता है, वह भी योग के फल को प्राप्त करता है।

**अर्चितं शङ्करं दृष्ट्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते।**
**हर्षात् प्रणम्यं तं भूमौ शिवलोके महीयते॥ 97॥**

भगवान् शंकर के अर्चन-पूजन और दर्शन से सभी पापों का मोचन हो जाता है। हर्षपूर्वक शिव को भूमि पर साष्टांग प्रणाम करके श्रद्धालु शिवलोक को जाते हैं।

**सम्पूज्यमानं विधिना यः पश्येच्छ्रद्धया शिवम्।**
**तत्समं फलमाप्नोति शिवस्य वचनं तथा॥ 98॥**

जो विधिपूर्वक शिवपूजा करता है और जो शिव के श्रद्धापूर्वक दर्शन करता है, वे समान फल ही प्राप्त करते हैं, ऐसा शिव का वचन है।

**यदशेषैः शिवे भक्तैः ध्यानार्चनकृतं तपः।**
**भक्त्यानुमोदनेनेशः तत्सर्वं प्रसीदति॥ 99॥**

जो शिव की अशेष भक्ति से ध्यान और अर्चन-पूजन करते हैं, तप करते हैं, उनकी भक्ति के अनुमोदन से ईश्वर शिव सर्वप्रकारेण प्रसन्न होते हैं।

**शिवपुण्यमहींनाथामशेषजनसेवितम् ।**
**कालेत्रयेपि निखिलं तच्च स्यादनुमोदते॥ 100॥**

शिवपूजन के सम्पादन के साथ इस पृथ्वी के नाथ की अशेष सेवा से तीनों काल भी निखिल ब्रह्माण्ड में उनका अनुमोदन करते हैं।

**इति त्रिसन्ध्यमखिलं यः पुण्यमनुमोदते।**
**असंशयमतिश्रद्धं तत्समं फलमाप्नुयात्॥ 101॥**

इस त्रिसन्धि— भूत, भविष्य, वर्तमान में जो अखिल पुण्य अनुमोदन करते हैं, वे असंशय अतिश्रद्धा से उनके समान फल को प्राप्त करते हैं।

**इति धर्माः शिवेनोक्ताः सुसूक्ष्माः सुमहत्फलाः।**
**कीर्तितान्तेनमानेन शिवार्चनविधिं प्रति॥ 102॥**

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



इस प्रकार यह धर्म भगवान् शिव का कहा हुआ है। जो अत्यन्त सूक्ष्म होते हुए भी महान् फल को देने वाला है। इसको सम्मानपूर्वक कहने से शिवार्चन की विधि पूर्ण होती है।

*इति श्रीशिवधर्मोत्तरपुराणे[26] गोषडङ्गविधिर्नाम प्रथमोऽध्यायः॥ 1॥*

इस प्रकार शिवधर्मोत्तरपुराण में गोषडङ्गविधि नामक प्रथम अध्याय पूर्ण हुआ।

*****

## अथ विद्यादानफलं नाम द्वितीयोऽध्यायः॥ 2॥

*अथ विद्यादातारप्रशंसाह, स्कन्दोवाच —*

**अथ विद्याविदेदाता विद्यात्मानं शिवात्मकम्।**
**तस्यादानं महादानं सर्वदानोत्तमोत्तमम्॥ 1॥**

स्कन्द बोले कि विद्वान, विद्या को देने वाला व्यक्ति अपनी विद्या के मानानुसार स्वयं शिवात्मक ही है। उस विद्या का दान महादान है। उसको सभी दानों में उत्तमोत्तम माना गया है।

*विद्यादानमाह —*

**अध्याप्य यजनैः शिष्याञ्छिवभक्तान्प्रबोधयेत्।**
**शिवविद्यानुसारेण विद्यादानं तदुच्यते॥ 2॥**

शिष्यों को पढ़ाकर, यजन-हवन सिखाकर, उन्हें शिवभक्त बनाकर और उपदेश देकर जो उनको आनन्द पहुँचाया जाता है, वह शिवविद्या के मतानुसार विद्यादान कहा जाता है।

*गुरुलक्षणम् —*

**संस्कृतैः प्राकृतैर्व्वाक्यैः यः शिष्यमनुरूपतः।**
**देशभाषाद्युपायैश्च बोधयेत् स गुरुः स्मृतः[1]॥ 3॥**

---

26. 'शास्त्रे' इति मातृकायाम्।

1. चतुर्वर्गचिन्तामण्यान्तर्गत परिशेषखण्डे 'शिवधर्मा'त् स्वीरोक्ति त्रुटिपूर्णम्। पृष्ठ 353

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



संस्कृत और प्राकृत भाषा ही नहीं, स्थानीय मातृभाषा के वचनों से जो कि शिष्य की धारणा शक्ति के अनुरूप हों, ऐसी देशभाषा (पूरी तरह से मातृभाषा) का प्रयोग करके जो शिष्य को बोध करवाता है, उसको ही गुरु कहा जाता है।

**यथा शिवस्य नैवान्तः सम्पूर्णस्य महात्मनः।**
**तथा विद्याप्रदानस्य नान्तः सर्वगुणात्मनः॥ 4॥**

जिस प्रकार शिष्यों की संख्या अनन्त होती है, कम नहीं, उसी प्रकार महात्माओं का सम्पूर्ण होना भी सम्भव नहीं है। ऐसे ही सर्वगुणात्मक विद्या प्रदान करने वाले का कोई अन्त नहीं है अर्थात् वे बहुत हैं।

**शिवाष्टगुणमैश्वर्यं विद्यादानादवाप्नुयात्।**
**इह कीर्तिश्रेयं ब्राह्मीं प्रज्ञावृद्धिं धनं सुखम्॥ 5॥**

विद्यादान से शिव का आठ गुना ऐश्वर्य सुलभ होता है। विद्यादान से इस लोक में कीर्ति बढ़ती है। श्रेय अर्जित होता है। ब्राह्मी प्रज्ञा बढ़ती है और धन तथा सुख की अभिवृद्धि होती है।

**योऽश्रद्धधानमात्मनंऽज्ञानमध्यापयेत्परम् ।**
**स याति नरकं घोरं पापीयान्ज्ञानघातकः॥ 6॥**

विद्या के प्रति श्रद्धा नहीं रखकर अपने आपको जो गहन अज्ञान के बीच लगा देता है, ऐसा व्यक्ति घोर नारकीय दुःख में पड़ जाता है और अपने को उन पापियों व ज्ञानघातकों में सम्मिलित कर लेता है।

**शिवज्ञानस्य कालेन विनष्टस्य प्रमादतः।**
**पुनातिरिक्तवर्णस्य मूर्खैर्दुर्लिखितस्य च॥ 7॥**

यही नहीं, अपने प्रमाद से ज्यों-ज्यों काल व्यतीत होता है, वह अपने शिवज्ञान को नष्ट कर देता है और वर्णरहित अर्थात् अन्त्यजों (अनुलोम-प्रतिलोम) की श्रेणी को प्राप्त हो जाता है जो कि कदाचित मूढ़ और दुर्भाग्य वाले माने गए।

**प्रमादाधीतपाठस्वसिद्धान्तविरोधिसाधितस्याल्पबुद्धिभिः।**
**ज्ञानावलेपमापन्नेराचार्यैर्बोधितस्य च॥ 8॥**
**व्यर्थैः पदैरुपेतस्य पुनरुक्तस्य चार्थितः।**
**पूर्वोत्तरविरुद्धस्य स्वसिद्धान्त विरोधिनः॥ 9॥**

ऐसे व्यक्ति प्रमादवश पढ़े गए पाठ से अपने सिद्धान्तों के विपरीत चले जाते

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkata and IKS-MOE



हैं। जो अल्पबुद्धि वाले ज्ञान साधना करते हैं, वे केवल ज्ञान का लेप मात्र ही चढ़ाए हुए होते हैं। उन्होंने अपने आचार्यों द्वारा दिए हुए ज्ञान को भी व्यर्थ का उपदेश होने का स्थान दे दिया है और बारम्बार कहे जाने के भाव रखते हुए उन पूर्व में उत्तर पाए हुए विरोधियों के अपने-आपको ही स्वसिद्धान्त विरोधी बना देते हैं।

**छन्दसातीवहीनस्य शब्दार्थरहितस्य च।**
**इत्येवमादिदोषैरुपे तस्य क्वचित्क्वचित्॥ 10॥**
**यः करोति पुनस्तस्य संस्कारं पूर्ववद्गुरुः।**

ऐसे लोग व्याकरण छन्दों से अति विहीन हो शब्दों के अर्थ नहीं समझकर उनसे रहित हो जाते हैं और इस प्रकार के आदि दोषों से यदि कोई उपरत होना चाहे तो वे पुनः अपने संस्कारों सहित पूर्ववत् गुरु के पास जाएँ।

**शिवतत्त्वात्मविद्धीमान् स विद्वान्परमेश्वरः॥ 11॥**
**न चास्य पुण्य माहात्म्यं वक्तुं शक्यं हि केनचित्।**
**यथा शिवस्तथैवायमस्मिन्नित्यं शिवस्थितः॥ 12॥**

जो शिवतत्त्व को जानने वाला है, वह विद्वान स्वयं परमेश्वर ही होता है। उसके पुण्य के माहात्म्य का कोई किसी भी प्रकार वर्णन नहीं कर सकता है क्योंकि जैसे शिव हैं, वैसे ही वह भी है। उसकी नित्य ही शिवस्थिति बनी रहती है।

*पुस्तकाश्रित विद्यादानाह —*

**विद्यादानं प्रवक्ष्यामि धनिनां पुस्तकाश्रितम्।**
**लिख्यते दीयते येन विधिना तत्फलं च यत्॥ 13॥**

अब मैं धनवानों द्वारा पुस्तकाश्रित विद्यादान के सम्बन्ध में कहता हूँ। इसी क्रम में पुस्तक लिखने और विधिपूर्वक पुस्तक दान करने के फल को भी बताता हूँ।

**शिवं सम्पूज्य विधिवत् तद्विद्यां पूजयेत्ततः।**
**गुरुं च शिववद्भक्त्या तुल्यमेतत्त्रयं यतः॥ 14॥**

पुस्तकदान से पहले शिव की पूजा करनी चाहिए। बाद में उस विद्या का पूजन करना चाहिए। अपने गुरु को शिव के समान ही मानें और उनकी भक्ति करनी चाहिए।

**यथा शिवस्तथा विद्या यथा विद्या तथा गुरुः।**
**शिवविद्यागुरूणां च पूजया सदृशं फलम्॥ 15॥**

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



जैसे शिव हैं, वैसी ही उनकी विद्या है और जैसी विद्या है, वैसे ही गुरु होते हैं। अतः शिव और विद्या की तथा गुरु की पूजा का एक जैसा फल कहा गया है।

**भूमिभागे समे रम्ये सर्वदोष विवर्जिते।**
**विद्यामण्डलकं कुर्यात् गन्धगोमयवारिणा॥ 16॥**

पूजन के लिए भूमि का ऐसा भाग देखना चाहिए जो कि समतल और रम्य हो तथा समस्त दोषों से रहित हो। वहाँ पर विद्यामण्डल बनाना चाहिए। उसको गन्ध, गोबर और पानी से लीपना चाहिए।

**अष्टहस्तं तदर्धं वा वृत्तं वा चतुरस्त्रकम्।**
**तन्मध्ये सितचूर्णेन लिखेत्पद्मं सुशोभनम्॥ 17॥**

यह मण्डल आठ हाथ अथवा उसका आधा प्रमाण वाला होगा। यह गोलाकार अथवा चौकोर होगा। उसके मध्य में सफेद चावल के चूर्ण से सुन्दर कमल की रचना करनी चाहिए।

**तद्बहिर्वर्णकैश्चित्रैर्नानाशोभां प्रकल्पयेत्।**
**पञ्चवर्णैश्च कुसुमैः यथाशोभमलङ्कृतम्॥ 18॥**

इसी प्रकार उसके बाहर की ओर तरह-तरह के रंगों से नाना आकार (रंगोली) कल्पित करें और पाँच रंगों के पुष्पों से यथाशोभा अलंकरण करना चाहिए।

**सितं वितानछत्रं वा तदूर्ध्वमुपकल्पयेत्।**
**मुक्तादाम परिक्षिप्तं किङ्किणीरवकान्वितम्॥ 19॥**

उस पर सफेद वितान-छत्र को बनाना चाहिए जिसमें मोतियों की लड़ियाँ हों और उसमें छोटे-छोटे घुंघरू लगाएँ जिनकी झंकार सुनाई देती हों।

**लम्बककैर्ध्वजदामैश्च मुक्तादामैः सकञ्चुकैः।**
**पवित्रपुष्पस्त्रक्दामैः घण्टाचामरभूषितैः॥ 20॥**

इसी तरह वितान को लम्बकों व ध्वज पंक्तियों तथा मोती की लड़ियों वाले हारों, कंचुकों सहित पवित्र पुष्पों की माला से लकदक करें। उसको घण्टा-चँवर आदि से विभूषित करें।

**विचित्रवस्त्रसच्छन्नैः चतुर्भिर्दण्डकैर्युतम्।**
**बुद्बुदैरर्धचन्द्रैश्च पर्वणान्युपशोभितैः॥ 21॥**

इसी प्रकार चित्र-विचित्र वस्त्रों की छवाई करें। चारों ओर दण्डों से युक्त



Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkata and IKS-MOE



कनात बनाएँ जिसकी शोभा जगह-जगह उकेरी गई बुँदकियों और अर्द्धचन्द्रमा के कारण दिखाई देती हों।

**सितपद्ममुखोद्गारैः चतुर्भिः कलशैः शुभैः।**
**शोभितं सितमृत्पात्रैर्यवशाल्यं कुरोद्भलैः॥ 22॥**

वहाँ सफेद पद्म वाले गोरे मुख के चार सुन्दर कलश शोभायमान करें और सुन्दर श्वेत मृत्तिका के पात्रों में जौ और शाली के निर्मल अंकुर (जवारे) लगाएँ।

*विद्यासिंहासनलक्षणम्* —

**विद्यासिंहासनं श्रीमान्नागदन्तादि निर्मितम्।**
**सुवर्णरत्ननिखचितं दुकूलास्तराणान्वितम्॥ 23॥**

विद्यासिंहासन गजराज के दाँत का बना हुआ होना चाहिए। उस पर सोना और रत्नों की जड़ाई करनी चाहिए। प्रयोगकाल में उस पर दुकूल बिछाया जाना चाहिए।

*दण्डलक्षणम्* —

**दण्डाननं वा श्रीमन्तं हेमरत्नोपशोभितम्।**
**नागेन्द्रदन्तखचितं रक्तचन्दनदारुजम्॥ 24॥**

दण्ड या छड़ी सोने और रत्नों के प्रयोग से शोभायमान हो। उसको हाथीदाँत के काम सहित रक्तचन्दन की लकड़ी से बनाया जाना चाहिए।

*लिप्यार्थ पुस्तकन्यासविधानम्* —

**स्नाव्यपुष्पगृहस्यान्तं गन्धपुष्पैः समर्चयेत्।**
**लेख्यं च लिखितं[2] चात्र विन्यसेत्पुस्तकद्वयम्॥ 25॥**

गृह के अन्त में सुगन्धित पुष्पों के जल को छिड़ककर गन्ध-पुष्प से पूजा करें और लेख्य (लिखने योग्य) और लिखित (पाण्डुलिपि) दो पुस्तकें वहाँ पर रखनी चाहिए।

**रोचनाचन्दनाद्यैश्च पुष्पैर्धूपैश्च पूजयेत्।**
**ध्वजप्रदीपमालाभिः क्षौमवस्त्रैश्च पूजितैः॥ 26॥**

---

2. एतद् प्रसंगे नन्दिपुराणमतं विचारणीयम्— उभयं क्वापि तल्लेख्यं समी कुर्य्याच्च वाचकम्॥ उभयं पूर्व्वमुत्तरञ्च लेख्यं पुस्तकं समीकुर्य्याद् न्यूनाधिक मात्रादि लेखनदूरी करणाभ्यां पूर्व्वपुस्तकवच्छुद्धं कुर्यादित्यर्थः। विधानपारिजाते, चतुर्थस्तबकः 3, 143, 349 पृष्ठ 314

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



इसी प्रकार गोरोचन, चन्दनादि सहित पुष्प और धूप से उनकी पूजा करें। वहाँ पूजनार्थ ध्वजा, दीपक, मालाओं और रेशमी वस्त्र का प्रयोग करना चाहिए।

**शिववत्पूजयेद्भक्त्या यथाविभवविस्तरम्।**
**तुरुष्कागरुकर्पूरैः सितचन्दन गुग्गुलैः॥ 27॥**
**दद्यात्पञ्चविधं धूपं समुत्क्षिप्यपुनः पुनः।**
**ततः प्रदक्षिणं कृत्वा नमेत्सर्वाङ्गकं बुधः॥ 28॥**

यह पूजन शिवपूजन के समान ही भक्तिपूर्वक हो किन्तु यथासामर्थ्य करना चाहिए। इस अवसर पर तुरुष्क (लोबान), अगरु, कपूर, सफेद चन्दन, गुग्गुल— इन पाँच प्रकार की धूप का खेवन करना चाहिए। धूप के लिए धूपपात्र को बार-बार उठाना चाहिए। तत्पश्चात् समझदार को प्रदक्षिणा करके साष्टांग प्रणाम करना चाहिए।

**सम्पूज्यैव शिवज्ञानं गुरुं सम्पूजयेत्ततः।**
**द्वितीये पुष्पग्रहके श्रीमदानन सम्मितम्॥ 29॥**
**शिववत्पूजयेद्भक्त्या शिवज्ञानप्रकाशकम्।**
**त्रिधा प्रदक्षिणं कृत्वा दण्डवत् प्रणमेत्क्षितौ॥ 30॥**

इस तरह शिवज्ञान की पुस्तकों का पूजन करने के बाद अपने गुरु की भी भक्तिपूर्वक पूजा करनी चाहिए। दो पुष्प उठाकर श्रीमान गुरुदेव के मुख पर चढ़ाएँ। गुरुदेव को भगवान् शिव के समान ही भक्तिपूर्वक पूजें क्योंकि गुरु ही शिवज्ञान के प्रकाशक हैं। उनकी तीन बार प्रदक्षिणा करके दण्डवत प्रणाम करने के लिए भूमि पर लेट जाएँ।

**विज्ञापयेत्समुत्थाय जानुभ्यां धरणीं ततः।**
**कृताञ्जलिपुटो भूत्वा प्रणिपत्य पुनर्गुरुम्॥ 31॥**

तदनन्तर भूमि से उठकर घुटनों के बल बैठे और हाथ जोड़कर पुनः गुरु को प्रणाम करते हुए यह निवेदित करें —

**'भगवन्! त्वत्प्रसादेन शास्त्रे सञ्चरयाम्यहम्।**
**तथैवास्त्वित्यनुज्ञातः शास्त्रपुण्यमथाचरेत्'॥ 32॥**

"हे भगवन्! आपकी कृपा से मेरा शास्त्रों की ओर संचरण हो रहा है। अतः उसी के अनुरूप आशीर्वाद देकर मुझे अनुगृहीत कीजिएगा ताकि मुझे सद्शास्त्रों का पुण्य सुलभ हो सके।"

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkata and IKS-MOE



मङ्गलैस्तूर्यघोषैश्च कृत् स्वस्त्ययनः शुचि।
स्नातः शुक्लाम्बरधरो गन्धमाल्यैश्च भूषितः॥ 33॥
हेमाङ्गुलीयपाणिस्तु कटकाद्यैरलङ्कृतम्।
लिखेत् प्रणम्य देवेशं लेखकः श्लोक पञ्चकम्॥ 34॥

इस अवसर पर मंगलगान और तूर्यघोष के साथ पवित्र स्वस्तिवाचन कराएँ। स्नान करके उजले सफेद वस्त्र धारण करें। सुगन्ध लगाएँ और माला से विभूषित होना चाहिए। अपनी अंगुली में सुवर्ण की अँगूठी धारण करें और कटक (कड़ा) आदि से अलंकृत होना चाहिए। इस व्यवहार के उपरान्त देवेश भगवान् शिव को प्रणाम करके (लेखन प्रतिज्ञार्थ) पाँच श्लोकों को लिखना चाहिए।

*गुरुव्रतिनद्विजार्थ भोजनकर्त्तव्याह —*

ततो विविध भक्ष्यान्नपानक व्यञ्जनादिभिः।
भोजयेच्चगुरुं पूर्वं व्रतिन् सद्विजानपि॥ 35॥
दीनान्धकृपणानाथान् बालवृद्धकृशातुरान्।
मातृपितृसुहृद्बन्धूने तान्सर्वांश्च भोजयेत्॥ 36॥

उक्त लेखन-प्रतिज्ञा के बाद भोजन करवाने के लिए नाना प्रकार के खान-पान और व्यंजनों से अपने गुरुदेव और ब्राह्मणों सहित व्रतिनों को भोजन करवाना चाहिए। बाद में दीनों, अन्धों, कृपणों, अनाथों, बालकों, वृद्धों, दुर्बल और बीमार लोगों सहित माता, पिता, मित्र और भाई-बन्धु आदि सभी को भोजन करवाएँ।

समाप्यैवं गुरुं पश्चात् भुञ्जीयाद्भृत्य संयुतम्।
दत्वा गणबलिं रात्रौ ब्रह्मचारी निशिस्वपेत्॥ 37॥

इस तरह गुरु के साथ भोजन होने पर सभी सेवकों को भोजन करवाएँ और गणों को बलि निवेदित करके रात्रि में ब्रह्मचारी होकर सो जाना चाहिए। (इस प्रकार प्रथम दिवस का कर्त्तव्य हुआ)।

*विद्यामण्डलकं विधानम् —*

अपरेह्नि पूर्वाह्णे विद्यामण्डलकं बुधः।
कृत्वा द्विहस्तमात्रं तु नानावर्णोपशोभितम्॥ 38॥
यवाङ्कुरशरावाद्यैः चित्रकल्पैरलङ्कृतम्।
स्वं धूपादि समायुक्तं वितान विततताम्बरम्॥ 39॥

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE


दूसरे दिन सुबह उठकर पूर्वाह्न में ही समझदार विद्यामण्डल की रचना करें। यह दो हाथ प्रमाण से बनाएँ और उसको नाना रंगों से सुशोभित करना चाहिए। वहाँ पर सकोरों-गमलों में जौ के अंकुर लगाएँ और सजावट के लिए अल्पनाएँ (रंगोली) बनाएँ। साथ ही आकाशीय वितान तानकर उसको धूपित करना चाहिए।

**शिवयन्त्रासनासीनं तन्मध्ये पूज्यपुस्तकम्।**
**एवं लिखेद्वाचरेद्वा कृत्वा पूजां दिने दिने॥ 40॥**

वहाँ पर शिवयन्त्र के ऊपर आसीन हो उसके मध्य में पूज्य पुस्तक रखें। इस प्रकार प्रतिदिन पुस्तक को लिखें अथवा वाचन और पूजन करना चाहिए।

*लेखनार्थाक्षरविधानम् —*

**चतुरस्त्रैः समे शृङ्गैः नातिस्थूलैर्नवाङ्कुरैः।**
**सम्पूर्णावयवै स्निग्धैः नाति विच्छिन्नसंहतैः॥ 41॥**
**मात्रानुस्वारसंयोगह्रस्वदीर्घादि लक्षणैः।**
**नन्दिनागरकैर्वर्णैः लेखयेच्छिवपुस्तकम्[3]॥ 42॥**

उक्त पुस्तक को लिखने में जिन अक्षरों का प्रयोग हों, वे चौकोर हो, समान आकार वाले, समान ऊँचाई लिए हो। वे अधिक मोटे नहीं हो और उनमें नवीन प्रयोग नहीं होने चाहिए। अक्षरों को उनके सम्पूर्ण अवयवों (शिरोरेखा, कलमकारिता, योज्यायोज्यता आदि) के साथ लिखें, वे साफ-सुथरे हों और न तो उनके बीच अधिक दूरी हो और न ही अधिक समीपता हो। मात्रा, अनुस्वार के संयोग के साथ ही लघु और दीर्घ लक्षणों का प्रयोग करते हुए 'नन्दिनागरी' वर्णों में शिव पुस्तक का लेखन करना चाहिए।

*पुस्तकलेखनान्तरकर्त्तव्यम् —*

**सम्पूज्येत्पूर्वविधिना पुनः पूजां प्रकल्पयेत्।**
**शिवाग्निगुरुविद्यानां चोपवासप्रयत्नतः॥ 43॥**

जब पुस्तक की रचना हो जाए तब पूर्व में बताई गई विधि के अनुसार पुनः पूजा करें। शिवाग्नि, गुरु, विद्या की पूजा और उस दिन सप्रयत्न उपवास रखना चाहिए।

**कल्पयेज्जागरं तत्र वादित्रैर्मधुरस्वनैः।**

---

3. 'नाभिसन्ततिविच्छिन्नं न च श्लक्ष्णैर्न कर्कशैः। नन्दिनागरकैर्व्वर्णै लेखयेच्छिवपुस्तकम्।' देवीपुराण (91, 53); चतुर्व्वर्गचिन्ता. दानखण्डे (पृष्ठ 545)

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkata and IKS-MOE



गीतनृत्तैर्बहुविधैराख्यानैश्च शिवात्मकैः ॥ 44 ॥

इस अवसर पर जागरण करना चाहिए। उसमें वाद्यवादकों की कर्णप्रिय प्रस्तुतियों के साथ-साथ शिव लीलात्मक गीतों पर नृत्य हों और बहुविध आख्यान-कथाएं हों।

वेदघोषैश्च विविधैः प्रेक्षणीयैः सुशोभनैः।
क्रीडायन्त्रप्रयोगाद्यैरित्येवं क्षपयेन्निशाम् ॥ 45 ॥

बीच-बीच में वेदवचनों का घोष हो, तरह-तरह की देखने योग्य, शोभाजनक लीला प्रस्तुतियाँ हों। उसमें क्रीडायन्त्रों[4] का प्रयोग किया जाए और इसी तरह पूरी रात्रि व्यतीत करनी चाहिए।

*शिवविद्याविमानवर्णनम् —*

शिवविद्याविमानं च कुर्यात् प्रातः सुशोभनम्।
पञ्चषट्कर्तृभौमं वा गुरुवंशादिकं दृढम् ॥ 46 ॥
विचित्रवस्त्रसंच्छन्नं सर्वशोभा समन्वितम्।

सुबह होने पर शिवविद्या विमान (बेवाण, पालकी) की सजावट करें। यह विमान, पाँच या छह भूमिका (मंजिल) वाला हो और इसको उठाने के लिए सुदृढ़ बाँसों का प्रयोग किया जाए। उसको तरह-तरह के रंगों वाले वस्त्रों से आच्छादित करें और समस्त शोभा से युक्त करें।

विद्यासनं तु तन्मध्ये शिवज्ञानपुस्तकम् ॥ 47 ॥
हेमरत्नाचितं दिव्यमणि वा दन्तशोभितम्।
विचित्रं चित्रयुक्तं वा बहिरुत्कीर्णकम्बलम् ॥ 48 ॥
पार्श्वतः छत्रसंयुक्तं सुदृढं सूत्रबन्धनम्।

उक्त शिवविद्या विमान में विद्यासन के बीचो बीच शिवज्ञान पुस्तक को स्थापित करें। उस विद्यासन को सुवर्ण और रत्नों से अथवा दिव्य मणियों या हाथीदाँत की जड़ाई से शोभायमान किया जाना चाहिए। उस पर विचित्र उभरे हुए चित्ररूप वाले कम्बल होंगे। उसके दायें-बायें छत्र होंगे जो सुदृढ़ सूत्र बन्धन में बाँधे जाएँगे।

---

4. क्रीडायन्त्रों के रूप में पालकीदार झूले, हिण्डोले आदि स्वीकार्य रहे हैं। राजा भोजकृत 'समराङ्गणसूत्रधार' के यन्त्राध्याय में विविध लोकप्रिय क्रीडायन्त्रों का विवरण आया है। इसके अन्तर्गत शैलूष-नटों के कौतुक प्रदर्शन में सहायक यन्त्रादि भी स्वीकारे जा सकते हैं।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection

CC-0. In Public Domain. Digitization by Agam Nigam. Funding Tattva Heritage Foundation, Kolkatta and IKS-MOE



**सम्पूज्य गन्धपुष्पाद्यैः पूर्वोक्तविधिना बुधः ॥ 49 ॥**
**समुत्थापनयेद्भक्त्या तद्विमानं शिवाश्रमे।**
**सुस्थिरं रथमुख्येन पुरुषैर्वापि बलान्वितैः ॥ 50 ॥**

वहाँ पर ज्ञानी को गन्ध-पुष्पादि से पूर्ववर्णित विधि के अनुसार पूजन करनी चाहिए। उस विमान को जो कि शिवाश्रम होता है, भक्तिपूर्वक उठाएँ। यह कार्य नियमित-नियुक्त रथ-मुखियाओं से हो अथवा बलिष्ठ पुरुषों को करना चाहिए।

**छत्रध्वजपताकाद्यैः वितानै स्तुत्य निस्वनैः।**
**मङ्गलैर्वेदघोषैर्वाद्यैः धूपैः कलशैः शुभैः ॥ 51 ॥**
**चारणैर्वन्दिभिर्वाद्यैः स्त्रीसङ्गीतैर्विभूषितैः।**

इस दौरान छत्र, ध्वज-पताकादि सहित वितान की रचना की जाए जिनके साथ-साथ स्तुतिगान होता रहे। मंगलपाठ और वैदिक ऋचाओं का घोष हो, वाद्यों का वादन हो। साथ ही धूपपात्र और सुन्दर कलश (पात्र धारक) हों। चारण, वन्दिजन विरुदपाठ करते और वाद्य वादन के बीच विभूषित स्त्रियाँ संगीत सुर छेड़ती हों।

**चारुचामरहस्ताभिः छत्रदण्डैः सदर्पणैः ॥ 52 ॥**
**महता जनसङ्घेन पुरतश्च महीपतिः।**
**धर्मवृद्धैः स्वयं गच्छेत् सर्वशोभा समन्वितः ॥ 53 ॥**

हाथ में सुन्दर चामरों को ढुलाते, छत्र, दण्ड व दर्पण लिए बड़ी संख्या में जन समूह हों। राजा स्वयं आगे चलकर धर्मवृद्धों को साथ लिए सर्वशोभा को बढ़ाते हों।

**अथवा हस्तियानरथं कृत्वा पुस्तकमानयेत्।**
**राजमार्गेण महता नगरान्तः प्रदक्षिणम् ॥ 54 ॥**

पालकी के अतिरिक्त उक्त शिवज्ञान पुस्तक को हस्तियान अथवा रथ में सजाकर भी लाया जा सकता है। इस प्रकार बृहद् राजमार्गों से पूरे नगर की प्रदक्षिणा की जानी चाहिए।

*अकालकौमुदीदेवसत्रञ्च वर्णनम्—*

**सर्वायतनपूजां च स्वधनैः कारयेन्नृपः।**
**दशदिक्षु बलिं दद्यान्नगरस्य समन्ततः ॥ 55 ॥**

राजा को चाहिए कि सर्वायतन (सभी नाम देवता) पूजा अपने निजी खर्च करें। इस दौरान दसों ही दिशाओं और नगर के चारों ही ओर बलि निवेदित करनी चाहिए।

Center for Shaiva Studies, Pondicherry Collection